प्रभास-मिलन।

(पौराणिक दृश्य काव्य।)

उचितवक्ता सम्पादक
पण्डित दुर्गाप्रसाद मिश्र
सम्पादित।

कलकत्ता।

९७ चोरबगान भारतमित्र प्रेस से
पण्डित कृष्णानन्द शर्म्मा कर्तृक मुद्रित और प्रकाशित।

मूल्य ।/)   संवत् १९५६।

भूमिका।
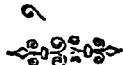
प्राय: पांच वर्ष व्यतीत हुए कि, "राजकीय बंग रंग भूमि" (Royal Bengal Theatre) के अध्यक्ष महाशय ने "प्रभास यज्ञ" नामक बंगला पुस्तक को हिन्दी में गीति-रूपक बना देने का अनुरोध किया और इसी से मैंने इस कार्य्य में सहसा हस्तक्षेप तो कर दिया, परन्तु मुझे निज लिखित कविता में असंतोष उत्पन्न हुआ और चित्त विरत हो गया, ऐसे ही अवसर में मैं कार्य्य विशेष से वा सौभाग्य क्रमसे श्रीवृन्दावन धाम में उपस्थित हो गया और मेरे "उचितवक्ता" के प्रधान धुरंधर लेख सहायक प्राचीन परिचित प्रवीण सित्रवर गोस्वामिवर्य्य श्रीयुत मधुसूदन लाल महाराज से मैंने इस कार्य्य के साङ्गोपाङ्ग समाधा करने का आशय प्रगट किया और उन्होंने बड़ी योग्यता के साथ इस पुस्तक को प्राय: एक मास में सुसम्पादन कर मुझे प्रत्यर्पण कर दिया। मैं इस लिये उनको आंतरिक कृतज्ञता के साथ अनेक धन्यवाद प्रदान करता हूं। सच तो यह है कि यदि उक्त महोदय स्वीकार न करते तो कदाचित यह पुस्तक हिन्दी में प्रकाशित न होती। वास्तव में यही महाशय इस नाटक के रचयिता हैं और मैं केवल एक उपलक्षमात्र हूं।

दुर्गाप्रसाद शर्म्मा।

प्रभास-मिलन ।

प्रथम अङ्क ।

प्रथम गर्भाङ्क।

स्थान निकुंज कानन ।

'राधिका' वृन्दा और सखीगण ।

राधिका—वृन्दे ! अबमुझे क्या समझाती हो कहो ? कृष्ण के बिना जीवन धारण करना वृथा है। हां तुम मेरी एक बात मानना ।

गीत ।

जो पै प्राण देह तज जांय ।
दरहु न अनल दाह जमुना जल जिन तनु देहु बहाय ।
सजनी ! या हत-जीवन में अब जियें कहा सुख पाय ।
तुलसीदाम लेप चंदन अङ्गलिख हरिनाम बनाय ।
या तमाल तरु बांध रखियो अधिक जतन मन लाय ।
कियो विलास श्याम यतन सो यही कहत ससुझाय ।
मेरो मरन देख जिन सजनी यामें कछू भुलाय ।

(मूर्छा होती है)

वृन्दा — गीत ।

हाय यह कहा भयोरी हाय ।
हाय मूरछित होय पियारी भूमि पड़ी विलखाय ।
बतिया कहत श्याम सुंदर की कहा पड़ी यह दाय ।
राधाकी यह भई कहा गति देख विशाखा आय ।

तैने ही यह पाठ पढ़ायो मोहन रूप दिखाय।
जानत ही न कछू सरला यह तैं सब रच्यो उपाय।
अंकित भयो रूप सो प्यारी को कोमल हियपाय।
कढ़ी न कोटि उपायन हियतैं औरहु जात समाय।
अब प्यारीके प्राण बचन की दीजै जतन बताय।
हा ! हा ! सखी विशाखा आवहु आवहु तुरतहि धाय।
देखहु प्राण राधिका के तन हैं कै गये बहराय।
धरहु तूस तूला नासा तर श्वास धुनीन लखाय।
इक तौ गये श्याम सुंदर तज प्यारी हू तजि जाय।
हाय इतेक धौंस मैं छूटत अब ब्रज वास जनाय।
भये मनोरथ विफल हाय यह मन को गयो बिलाय।

प्रथम सखी – हाय हाय यह क्या हुआ चंद्रवदनी तो मुर्छित हो गई। अब हमारी क्या गति होगी। प्यारी जीवन से श्याम मिलने की आशा थी अब तो विधाता ने वह समस्त सुख हर लिया। अब हमारे जीने का क्या फल है। चलो अब हमभी अपने प्राण तज दें।

(नेपथ्य में गान।)

जयराधे ! श्रीराधे ! राधे !
वृन्दा विपन विहारिनि राधे !
उन्मद मदन प्रमोदिनि राधे !
मोहन मदन मोहिनी राधे !
श्रीहरि हिये विलासिनि राधे !
जय राधे ! श्रीराधे राधे !

वृन्दा—सखी ! चुप चुप ठैरियो ! सुनतो सही देख राधे ! राधे ! कहकर कोई बंशी बजाता है, न ?

(नेपथ्य में वंशीध्वनि।)

द्वितीय सखी,—सखी नो, यह तो ठीक श्याम सुंदर की सी वंशीध्वनि है।

तृतीय सखी—तो क्या श्रीकृष्ण आये ? हाय ! क्या इतने दिनों पीछे उन्हें अभागियों की याद आई !

प्रथम सखी—अरी ! अब आये तो क्या और न आये तो क्या; कमलिनी का प्राणान्त हो गया । हम तो जुगलरूप दर्शन ही के लिये जीती थीं। अब श्रीराधा बिना राधाकान्त को देखकर क्या होगा। आओ उनके आते आते हम यमुना में डूबकर अपने प्राण तजें।

वृन्दा—नहीं री नहीं ! ऐसा मत करना मेरी बात सुन हमारे मन का दुःख अवश्य मिटेगा। आओ हम तब तक सुगंधित फूलों से श्रीमती का शृंगार करें। फिर श्रीकृष्ण के आते ही चंदन तुलसी से देवाराध्य नित्य धन के चरण युगल का पूजन कर भव बंध से मुक्ति पावेंगे।

राधिका (मूर्छा से जागकर गीत ।)

आज सखि ! क्यों तुम मोद छई ।
जानी हाय सबै चिन्ता वार वार उन्माद भई ।

सखी गण—

अहो हम पागल नाहि भई ।
हरि वंशी रव सुनत सबै हम प्रेम प्रमोद छई ।
वहत मृदुल मलयानिल कलरव कोकिल कूज रही ।
प्रमुदित अलिकुल कमलन गुंजत यमुना मधुर वही ।
गावत मधुरी धुनि शारी शुक तरु बेलिन की डार ।
निरतत मोर मयूरिन के संग पुच्छन गुच्छ सम्हार ।
भयो प्रकाश नाशहिरदे तम शीतल तापित प्रान ।
विरह हुतास दूर मधुसूदन आये नागर कान ।

राधिका—अच्छा सखी ठैरो एक बेर मैं भीतो सुनं ।

(नेपथ्य में गान)

जयराधे ! श्रीराधे ! राधे !

वृन्दा विपन बिहारिनि राधे !
मोहन मदन मोहिनी राधे !
उन्माद मदन प्रमोदिनि राधे !
श्रीहरि हृदय विलासिनि राधे !
दीजे दरस कृपा कर राधे !
अरुन चरन पूजूं मन साधे !

राधिका—(गीत)

वृन्दे ! यह नहिं हरि वंशीरव ।
एते हू दुख माहि हंसाई ऐसो अनमिल बात कही अब ।
श्याम वेणु रव सुनत उरोजन ओजन होत मनोज विकार ।
यह वंशी धुन प्रविशत श्रवनन होत पयोधर पय संचार ।
हरि वंशी रवसुनत भृकुटिधनु आयुध होत विशिख संधान ।
यह वंशीरव सुनत नयन युग मनु चाहत हेरन संतान ।
सो वंशीरव सुनत हृदय मैं जागत मदन सुहाग ।
यारव के सुनतिहीं सजनी बढ़त दया अनुराग ।
यह विपरीत भाव हरि वंशी सुनत हृदय क्यों होय ।
यह नहिं श्याम होत निहचै मन वृन्दा दूजो कोय ।

वृन्दे ! देखा तो यह कोई भक्त आया होगा । नंदरानी सी वर्ष से निराहार है । इस वीणा की ध्वनि सुनते ही तो गोपाल आये समझ कर अभी दौड़ी जायगी । और फिर निराश होकर तुरत प्राण परित्याग कर देंगी तुम जल्दी जाकर इसे श्रीकृष्ण की वंशीके स्वर से वीणा बजाने को नाहीं करदो ।

(सब का प्रस्थान)

——:०:——

द्वितीय गर्भाङ्क ।

वनपथ

नारदजी का प्रवेश ।

नारद—आज मेरा जन्म सफल है कर्म सफल है । क्रिया सफल है आज मैं पूर्व पुण्य बल से सनातन ब्रह्ममयी कृष्ण मनो मोहिनी ब्रह्माण्ड जननी परमा प्रकृति आद्या शक्ति का दर्शन कर अपने नेत्रों को सार्थक करूंगा । जिस विष्णुमाया से जगत् विमोहित है जिस विष्णुमाया से ब्रह्माण्ड पूरित है जिस विष्णुमाया से विमोहित होकर महा विष्णुने वट पत्र पर शयन किया, आज मैं उस महामाया का दर्शन करूंगा । इससे अधिक और मुझे क्या आनंद है । आज मैं ब्रह्माजी की कृपा से आनंदमयी का विमल आनंद पाऊंगा ।

श्रीदाम के शाप से श्रीकृष्ण विना कमलिनी शत वर्ष से श्रीकृष्ण वियोग में है । राधिका जीके शोक के उच्छ्वास से दीर्घ विश्वास, से कहीं ब्रह्माण्ड का प्रलय न होजाय इसी शंका से विधाता ने मुझे मर्त्यलोक में भेजा है ब्रह्मा जी की आज्ञा से ही मैं व्रजमण्डल में उतरा हूं । आहा ! प्रथम आनंदमय वृन्दावन को गोलोक धाम की प्रतिच्छवि जान कर देवतागण यहां नियत निवास करते थे । तब यहां बड़ी मधुर वायु थी मेघ यहां मधु वर्षा करते थे । कुंड तड़ागों के जल में परम स्वाद था । फल पुष्प सब मधु मकरंद पूरित रहते थे । विहंग गण मधुर तान गान किया करते थे । किन्तु अब जगज्जीवन श्रीहरि के विना वह आनंद मय धाम आज श्मशान सा शून्य हो रहा है । यद्यपि प्राण स्वरूप श्रीहरि ओत प्रोत भाव से सर्वत्र व्याप्त हैं । तथापि व्रजवासियों के मनमें आज यह है कि श्रीहरि व्रज छोड़ कर चले गये हैं । हरि विरहसे सबही नीरस नीरव गंभीर अस्थिर

हैं। आहा! आनन्द दायक श्रीकृष्णचंद्र को अपने अपने हृदयमें उदित न देखकर इनका मन एक प्रकार विकृत हो रहा है। जो मूढ़ मोहवश होकर श्रीभगवान को हृदय से दूर जानते हैं उन लोगों की ऐसी शोचनीय दशा होती है। उनके नयन अन्धे कान बहरे और हृदय शून्य हैं वे केवल उन्मत्त के समान अस्थिर होकर संसार कानन में घूमते फिरते हैं। मैं शून्य धाम को पूर्ण करने के अभिप्राय से आनंदमयी के पास गमन करूंगा। देखें कृष्णमयी मेरी इच्छा पूर्ण करती हैं कि नहीं।

वृन्दा का प्रवेश।

वृन्दा—(स्वगत) यह मूर्तिमान अग्नि के समान तेजस्वी कौन है? स्वेत वरन स्वेतवस्त्र शुभ्र जटा जूट आनासाग्र भाल तिलक। कंठ में तुलसी माला हस्त में वीणाशोभित है। किन्तु यह क्या आश्चर्य है वीणा अपने आप "राधे राधे" शब्द से वेणुनाद से बज रही है। आहा! इसी वीणा का रव सुन कर श्रीकृष्ण की वंशी ध्वनि जानकर हम सब उन्मत्त हो गई थीं। पर यह स्वर हमारी श्रीराधाजी नहीं भुला सका। इनका भाव देखकर जान पड़ता है कि ये ब्रह्माजी के मानस पुत्र नारदजी हैं। तो अब इनसे कैसे परिचय पूछूं। इस बात का विचारना ही क्या है। जब श्रीराधिकाजी ने आज्ञा दी है तब भय काहे का है। (प्रकाश में प्रणाम कर।)

गीत।

कौन कहो तुम मंजु मुनी कित तें इत आये।
कहां जाहुगे कौन निकट का मन अभिलाये?
मोहन वंशी धुन पूरन क्यों बीन बजावत।
ब्रजनारिन को विरह अनल क्यों प्रबल जलावत।
जे तन राधानाथ हमें सब लगत अंधेरे।
ले राधा मन रंजन सदा हम हरिपद हेरे।

तुमै हिरदे बसत नागरी सब ब्रज मांहीं।
उचित दयामय! तुम्हें समय ऐसी यह नाहीं।
हरि बंशी रव करत सत्त सबरे ब्रजबासी।
हैं उद्दीपत करत भाव दूनो दुख रासी।
जब तें गये गुपाल तबहि तें श्रीब्रजरानी।
निस दिन रोवत रहत नयन जल धरनि भिजानी।
तुव बीणा रव सुनत कहीं जाये उठि धावें।
कहं मेरो गोपाल कहत रोवो जो आवें।
बिन पाये गोपाल होय मन अधिक निरासा।
तुरत प्रान तजि देय होय ब्रज परम बिनासा।
अहो महामुनि पड़े विषम सङ्कट तुम पाई।
राधा पठई मोहि तिहारे ढिग अकुलाई।
कारन निवारन श्याम वेणुरव बीन बजावन।
मानलेहु यह बचन महा मुनि त्रिभुवन पावन!

नारद—(गान)

भली भई तू भेंट! मिली मोहि पहिले आई।
ब्रह्मा कारज हेत मोहि ब्रज दियो पठाई।
मैं ब्रह्माको सुवन नाम नारद जग जानी।
तुरत लेचल मोहि जहां श्रीराधा रानी।
श्रीराधा के निकट प्रयोजन है कछु भारी।
तहां लेचलो मोहि यही बिनती ब्रजनारी।

वृन्दा—मुनिवर! आप के दर्शन से मेरा जन्म सफल हुआ। इसलिये आइये।

(दोनों का गमन)

तृतीय गर्भाङ्क।

(अभिमन्यु गोपके जनाने का द्वार देश)

श्रीराधिका और सखीजन।

श्रीराधिका—ऐसे समय में यह कौन भक्त आया है ? (विचार कर) ओहो ! श्रीकृष्ण विरह में—कहीं मेरे दीर्घ निश्वास से सृष्टि नाश न हो जाय। यह विचार कर ब्रह्माजी ने प्राण जीवन श्रीकृष्ण का मिलन कराने को नारद को यहां भेजा है। नारद की मनो वांछा पूर्ण करने को मैं यहां ऐसे ही उनको दर्शन दूंगी।

(नारदजी वृन्दादेवी के साथ आकर श्रीराधिकाजी को प्रणाम करते हैं।)

राधिका—हैं ! हैं ! यह क्या मुनि ! मैं गोपांगना हूं तुम ब्रह्मर्षि होकर मुझे प्रणाम करते हो ?

नारद—गीत।

मुक्ति विधायिनि मोहि भुलावत।
जो नहिं जानत ताहि भुलावहु मैंनिसदिन तुम्हरे गुन गावत।
माया महा त्रिगुण धारिणी तुम तारा तुमही निगम मयी हो।
नब वृषभानु सुता तुम देखो, तब श्रीहरिहिय प्रेम छयी हो।
तुमही हरिहर ब्रह्म प्रिया हो, तुमही हो ब्रह्मांड प्रसविनी।
ब्रह्म मयी तुम ब्रह्मस्वरूपा, ब्रह्मअंड पालन अनुभविनी।
हो तुम परावैष्णवी देवी, महा विष्णुकी जन्मविधायन।
योगातीता योगप्रिया हो, योगमाय अरु योग परायन।
हो श्रीमती राधिका श्रेष्ठा, श्रीगोविंदके मनो मोहिनी।
योगी गन बंदित तुम माता, हो तुमही गिरि सुता सोहिनी।
काम बीज अरु काम सरूपा, हो कंदर्प दर्पकी दमनी।
क्रीड़ा मयी प्रपंचातीता, ज्ञान मयीहो भव भय शमनी।

आहि नाहि मम हरहु काल भय, जयकाली कलिकलुष विनशनी।
जय राधे! जय राधे! राधे! जय जय वृन्दा विपन विलसनी।

चरणतले में प्रणाम करती हैं

राधिका—(जनान्तिक में।)

अहो वत्स! सब पूरन होंगे नारद! मानस काम तिहारे।
तुम चाहत मम वृन्दावनमें जुगल माधुरी रूप निहारे।
प्रति दिन पूरन प्रेम भाव सों करिहौं वृन्दा विपन विलास।
है यह गुह्य कथा अति गोपन काहू सन जिन करहु प्रकास।
करै प्रकास न पूरन होगी मनुज लोककी यह सत लीला।
ऐसे जाहित यतन करोसो तुरत मुदित मन आनंद शीला।

(एक सखी से।)

अतिथि आये भवन में कहौ सास से जाय।
बिन इनके सेवन किये है पातक अधिकाय।

(एक सखी गई और जटिला कुटिला को संग लेकर फिर आई। जटिला और कुटिला नारदजी को दंडवत् करती हैं।)

जटिला—देव रूपी तुम आये आज मेरा घर पवितर हो गया।

नारद—

हो जटिला तुम भागवान अति पुण्यवती री!
कुटिला तेरी सुता सुशीला परम सतीरी!
है लक्ष्मीसी पुत्र वधू तेरी सुख दाई।
एक वदन सो करहु कहा लौं कहं बड़ाई।
पंथ चलत है भ्रमित आय बैठो तल तरुवर।
कर अति विनय प्रनाम बोलि लाई मोहि निज घर।
भयो अतिथि मैं आप तिहारे गेह मझारी।
भागवान! अब करहु भोजनन की तुम त्यारी।
दूध दही घी क्षीर और जो होय तिहारे।

गंध पुष्प फल फूल नीर सब लाउ सम्हारे।
ब्रह्मसयी के चरन पूजिहौं हृदय उछाऊ।
ताहि निवेदित द्रव्य सकल भोजनमें पाऊं।
सती राधिका बिना रहैं नहिं कोउ गृह मांहीं।
लक्ष्मीरूपा सती सोइ सम परस कराहीं।
तो जटिला तुव गेह बैठ सें भोजन पाऊं।
नहीं कहो तो अबहि तुरत घर चलि जाऊं।

जटिला—

दासी तेरे वचन विप्र! हेला नहिं करि है।
जो तुम्हरे सग नाथ काज सो सब अनुसरि है।

सब का प्रस्थान।

चतुर्थ गर्भाङ्क।

पूजा घर के बाहर।

कुटिला का प्रवेश।

कुटिला—ए! मैया! ये क्या है! यह कैसी पूजा की पद्धत है। वो पूजा करेंगे बहू पूजाकी तयारी करें। और कोई घर में रह न सकेगा मैया तो बाबा जी को देखते ही मोह गई। जो उनने कहा उसी में राजी हो गई। यह भी न विचारी की स्यानी सोखो बहू को पराये मर्दके पास कैसे अकेली छोड़ दूं। अरे! मातो पुराने वख्त की है वो बिचारी इतनी ऊंचनीच क्या जाने। पर अब तो वो वखत नहीं है। आजकल स्त्री वालियों को अपनी बात बचाय कर चलना कठिन है आज कल नाते गोतें के लोगों का भरोसा नहीं है तिस में ये न जानें कहां का कौन है। उस देमारे कृष्ण ने भांजा होकर भी इस जालम राधा के साथ

क्या क्या रंग नहीं किये थे। पर : बहुत दिन की बात है अब कुछ ठंडी पड़ गई है। पर वह ा उसे भूली है। उसी की बातें याद कर कर दिन रात रोया करती है। और एक बेर उस बूढ़े डोकरे ने आकर क्या रंग किया था। उसे सगरे ब्रज में ढूंढ़ कर भी कोई सती पतिव्रता न मिली गणित करके देखा तब यही प्रश्न आया कि एक राधा ही सती है। मुझे तो ये अतिथि भी ऐसा ही धूर्त दीखे है। इस का खिलर खिलर हंसना टुमुर टुमुर देखना हमें तो भाई अच्छा नहीं लगे है। एक बेर किवाड़ की सेंद में से देखना चाहिये। घरके किवाड़ लगा कर एक सुन्दरी स्त्री को लेकर क्या पूजा होती है। जो कुछ ऐसा वैसा करे तो "ऐन" दादा को बुलाकर बुड्ढे डोकरा की ऐसी हड्डी तुड़वाऊं कि बस! एक बेर देखतो क्या करता है। (किवाड़की सन्धि में से देखती है) ऐसा! यह क्या है यह तो एक नई बात देखी। हाय! ये बहू भी कुछ कम नहीं हैं। बावारे बाबा! इस को छाती कैसी पक्की है। बेधड़क अपने एक पाव बढ़ाकर अस्सी वर्ष के बूढ़े ऋषि से पूजा करा रही है। गजब किया बहू ने इसे यह भी डर नहीं है कि ब्राह्मण से पाव पुजाकर कही कोढ़कुष्ट न हो जाय कौन जाने भाई ये बहू कुछ मोहिनी जानती है। जो एक बेर इसे देखता है वही मोह जाता है। हमारे दादा ही को देखो न? मैंने कई बेर काले को हाथों हाथ पकड़ाय दिया था। पर दादा के लेखे तो भी राधासती है। वही जादू टोना कर कर सब ही को भुलाय देती है पर कुटिला भूलने वाली नहीं है। (फिर देख कर) हाय। हाय! ये कैसी बेहया है ऐसी ही जुगन है। बूढ़े ब्राह्मन के खाये पहले ही आप खाने लगी। हाय! खाते खाते पत्तल में झूठन भी छोड़ दी। (फिर देखकर गजबरे गजब बुड्ढे की यह कैसी बुद्ध सठियाय गई है। महाप्रसाद के तरह बहू की जूठन खाने लगा। यह क्या हुआ ब्रह्माजी के पुत्र

की कुछ बुद्धि बिगड़ गई है, नहीं नहीं मेरी आंखों का कुछ भ्रम है। (आंख मोड़ कर फिर देख कर ओ हो! यह क्या है। यह तो वह नहीं है आहा क्या सुंदर मूर्ति है। यह तो जगत् जननी कैलास वासिनी उमा देवी है। अहा! मा के चरणों में सचंदन कमल पुष्प की क्या शोभा है। हाय! मैं बड़ी अभागी हूं। ऐसा अमूल्य धन हाथ में पाकर भी नहीं पहचान सकी। हाय मैंने कितनी कटु बातें कहीं हैं कितने कलंक लगाये हैं कितनी निन्दा की है। मेरा किसी तरह निस्तार न होगा? मैं देवी के चरण पकड़ कर रोऊंगी। तब भी दया न करेंगी। माता दुष्ट बेटी के मुख के ओर न देखेगी? अब तो यही बात है जो माता मुझ पर दया न करेगी तो मैं उन्हीं के चरणों पर प्राण तज दूंगी।

द्वार खोल कर नारद और श्रीराधा का प्रवेश।

राधा—

हे मुनिवर जो आस, तुम ने अपने मन करी।

आवे मेरे पास सो वांछा पूरन भई।

कुटीला—मा! मा! मेरे अपराध क्षमा करो मुझे रक्षा करो दासीका दोष मार्जन करो।

(राधिकाजीके चरणों में गिरती है।)

राधिका—अजी! अजी! तुम नन्द होके यह क्या करो हो। आज तुम्हारा यह उलटा स्वभाव देख कर मुझे बड़ा अचम्भा होता है। मैं तो साधारण कन्या तुम्हारी भाभी हूं। तुम मेरे पांवों में पड़कर और उलटा मुझे दोष चढ़ाओ हो। उठो उठो ऋषिराज को अपनी माता के पास ले चलो मैं उनसे बातचीत करके बिदा होंगी।

(सब का प्रस्थान।)

पञ्चम गर्भाङ्क।

नंद मंदिर।

नन्द और यशोदा।

नन्द—हा! यशोमति! अब तुम क्यों वृथा रोती हो, तुमने आहार निद्रा सब छोड़ दिया है। दिन रात रो रोकर अन्धी हो गई हो। तुम्हारे आंसुओं से यदि गोपालका मन द्रवता तो क्या अब तक हमको तुमको छोड़कर वसुदेव देवकीके पास रह सकता? हाय उस निठुर ने मुझे कैसा समझा कर मथुरासे विदाकर दिया। मैं उसकी बातोंमें आगया। उसे लोग जग चिन्ता-मणि कहते हैं पर हम जो उसके लिये दिन रात चिन्ता करते हैं, यह चिन्ता तो कभी भी उसके मनमें नहीं आती है। दिन रात रो रोकर हमारे दोनों की हाड़ोंकी ठट्टी रह गई है। प्राण कण्ठमें आ रहे हैं तब तो हमारे ऊपर उसे दया नहीं आई।

यशोदा—मेरा लाल ही जब मुझे छोड़ गया तब और क्या है। पर न जाने ये पाषाण प्राण अब तक क्यों रहे हैं। जब मन व्याकुल हैं प्राण व्याकुल हैं तब आपके समझाने से क्या हृदय शीतल होगा? मेरे और क्या है। भला मैं किनको देखकर प्राण रखूं। (मूर्छित होकर गिरती है।)

[नेपथ्य में वीणाध्वनि और गान।]

जय जय कृष्ण! कमल दल लोचन!
जय मुकुन्द! भव पाश विमोचन!
मोहन मदन! मुरारी जय जय!
नन्दलाल! गोपाल! दयामय!
कालीदमन! पूतना घातन!
केशि दमन! मुर जीव विनाशन!
जय जय मुरली वदन! हरे!

जय जन पालन हरे हरे !

नाथ हरे यदुनाथ हरे !

[यशोदाजीका मूर्छा भङ्ग होकर उठना ।]

नन्द—यशोदे ! हम इतने दिनसे जिस आशा तरुवर के मूलको आंसुओंके जल से सींचते थे, आज उसमें फूल फल लगने की आशा होती है। क्योंकि देवर्षि नारद जब यहां आये हैं तो अवश्य कोई गूढ़ कारण है। रानी ! आओ ! हम अब रोदन बन्द कर भक्ति भावसे मुनिवरके चरणों में प्रणाम करें। उनके आशीर्वादसे श्रीकृष्ण को देखेंगे।

(नारदजी का आना और नन्द यशोदाका उनको प्रणाम करना ।)

नंद—देवर्षे ! आइये ! आइये !

नारद—ब्रजराज ब्रजरानी ! तुम्हारा सब कुशल तो है ?

यशोदा—

गीत ।

हे ऋषिराज ! हमारे दुख की कछू न पूछो बात ।
जबतें कृष्ण गये तज मुनिवर ! छिनक न कुशल लखात ॥
आनंद कुशल गुपाल संग गये विरह विथा दिन रात ।
शोक विकल गोकुल, अरकेलता जलनिधि मधि लहरात ॥
खोयो मैं सरवस धन अपनो इन्द्र नील मणिगात ।
मधुसूदन अब कहा रह्यो है सोच सोच पछतात ॥

(मूर्छित होकर गिरती है ।")

नंद—हा महामुनि ! जान पड़ता है आज यशोदा का जीवन शेष हुआ। शरीर स्तब्ध नेत्र स्थिर हैं त्रास से कण्ठ घरांता है। श्वांस बंद होता जाता है। इतने दिन में ये तो सब दुःख से निवृत्त भई। केवल यही अभागा इन दुःखों के भोगने को जी-

वत है। हाय! गोपाल! तेरे मनमें क्या यही था। एक बेर आय कर अपनी माकी गति तो देख जा!

नारद—व्रजराज! घबड़ाओ मत यशोदा मरी नहीं हैं। मैं अभी इनकी मूर्छा भङ्ग करता हूं। व्रजेश्वरी उठो! उठो! अब कृष्ण शोकमें विकल नहीं होना। मैं प्रतिज्ञा करता हूं "शीघ्र ही तुम्हारे गोपालको तुम्हारे पास ला दूंगा!" हाय! यह क्या हुआ अब भी चेत न हुआ। तब क्या होगा। कृष्णमाता यदि कृष्ण शोक में तनत्याग देंगी तो दयामय के नाममें कलङ्क होगा, और मैं भी अपराधी बनूंगा। जो हो! अच्छा तो अब वीणा की तान में श्रीकृष्णकी स्वर का सा स्वर मिलाकर एक बेर मां! मां! पुकारू! देखूँ इससे होश होजाय तो होजाय।

(वीणाके स्वर में गाते हैं।)

कहं मा! मेरी, कहां मा मेरी।
ए नंदरानी! कहां मा! मेरी!
आयो तेरो लाल भात मैं।
मोहि मलाई माखन देरी!
मात! भयो मैं विकल क्षुधित अति
एक बेर गोदी मोहि ले री॥

यशोदा—(मूर्छा से जागकर उन्माद में)

गोपाल! ए गोपाल! कहां बोला बेटा! जलदी अइयो! आ बेटा! मेरी गोदी में आजा। (इधर उधर देखती हैं) महाराज! कहां है मेरा गोपाल! अरे गोपाल आबेटा! अभी तो मेरा राजा बेटा मा। मा! कहकर पुकार रहा था। अभी कहां चला गया?

नारद—(स्वगत) मैंने यह बड़ा अन्याय किया। कृष्ण जननी यदि इस अपराधमें मुझे शाप दें तो बड़ा सन्तापित होना होगा। जो हुआ सो हुआ। अब मधुर वाक्योंसे इनको सान्त्वना करनी

चाहिये। प्रकाशनें ब्रजरानी! मेरा यह दोष क्षमा कीजिये। तुम्हें मूर्छित देख कर सब जने शोकसें व्याकुल हो गये थे, इसीसे श्रीकृष्णके स्वरसे तुमको पुकार कर तुम्हारी मूर्छा जगाई थी देवी अब तुम्हारे इस घोर दुःखकी अमावस्याकी रात्रिका अन्त होनेमें देर नहीं है। मैं ब्रह्माजी की आज्ञासे तुम्हारे गोपालको यहां ले आने द्वारका जाता हूं। अब शीघ्र ही तुम अपने गोपाल को यहां देखोगी।

यशोदा—नारदजी! आइये देखिये ये सब मेरे प्राणाधार गोपालके लीलास्थल हैं। यद्यपि गोपाल छोड़ गया है पर उसके सब काम, सब क्रीड़ा सब लीला सदा हमारे मनमें स्फूर्त्ति पाती हैं।

(गीत

कैसे कहा भयो नहिं जानी।

जब ब्रजराज दूरतें आवत, कहां कृष्ण कहि बचन सुनावत
तुरत मुरारी सीस पादुका आप धरत अगवानी॥
यह लखि मेरो शीतल हीयो, आव वत्स कहि अङ्कलीयो
शत शत बार चूम लालन मुख मोद हिये अतिमानी॥
गयो कहां? इन दोषन छोड़, मेरो सुत मोसूं मुख मोड़
कैसी करूं कहो मुनिराज, अब कछु समझ परत ना हाय॥
जो कछु मेरी बात न मानी, करत नेक कहुं आना कानी
मैंने दियो उलूखल बांध, अब जिय सुमर सुमर अकुलाय
पर घर जाय करत उतपात ब्रजबनिता मोसो कहि जात
नारद मन्दभागिनी मैंने, तरु बांधे दोउ हात॥
वत्स गयो तज याही खेद, मैं जानी कछु ना यह भेद
अब मैं कहा कहूं दुःख हाय सुनि मैं रैन दिनाविलखात॥

[विकलतासे रोदन करती हैं]

नारद—(गीत)

यामें कहा दोष जसुमति तुव, यही लोककी रीत
शासन करत मात पित सुतको सिखवत सुन्दर नीत।
मन दुःख कर जिन रोदन कीजै, दीजै मोहि बिदाई।
मात ! गुपाल तिहारो अब मैं तुरतहि देत मिलाई।
सांच कहत मैं भरत त्रिवाचा, निश्चय मन कर लीजै
मैं अब जात द्वारकापुर को प्रफुलित अन्तर कीजै।

यशोदा—

मङ्गल गमन करहु मुनि पुंगव ! शीघ्र आगमन करियो।
राखौ प्रान गुपाल लायके मेरे अङ्कमें धरियो।

द्वितीय अङ्क।

प्रथम गर्भाङ्क।

द्वारकापुरीका राजपथ।
(श्रीकृष्णके बालकोंका प्रवेश।)
[गीत]

ताल-ताल तालसे तू नाच रे बेताल !
खूब जोर जोरसे तू हातसे दे ताल !
डाङ्गर डूङ्गर भाङ्गर भूङ्गर भां भीं भाल,
तेरे गले दूले भूले हाड़नकी माल।
वीं ववर्वी वींववर्वी वींवन वाल
वींववर्वी वींववर्वी वाजे दोनों गाल।
मांड़ बैठे गङ्गाराम ओढ़े व्याघ्र छाल
दोनों ओर मुरदा खोर कर रहे हैं ख्याल।

[नेपथ्यमें वीणाके स्वरसे नारदका गान]

राधेकृष्ण ! राधेकृष्ण ! राधेकृष्ण ! आ—ई—।
गाओ वीणा युगल नाम मधुर स्वर मिलाई॥
माधुरी अनुपम निहार परै मन काम।
घड़ी पलक द्योस रजनि गाओ अष्ट जाम॥
गाओ रवि गाओ शशि गावौ ग्रहतारा।
गाओ सकल जगत प्रकृति होकर मतवारा॥
गगन भूमि वासी सब गावहु यह नाम।
धारा धर धारा धरहु गरज धुनि सुवाम॥
निरझर ! तुम याही सुर झरौ नीर झारा।
प्रेम धार प्लवित होहु त्रिभुवन यह सारा॥

प्रथम बालक—ढेंकी * चढ़ो कौन यह आवै

द्वितीय बालक—'याकी भभी डाढ़ी जटा हलावै।

तृतीय बालक—'अरे' जने कहा हातमें याके ग्याऊं ग्याऊं मधुर बजावै।

चतुर्थ बालक—नाचन कूदन देखे याको, मेरे मन कछु भय उपजावै।

प्रथम बालक—यहै कोय जन्तु किधौं स्वांग साजो।

द्वितीय बालक—अरे भूत आयो सब वेग भाजो!

(नारद मुनिका प्रवेश)

नारद—मुझे देख कर श्रीकृष्णके बालक डरपते हैं, चलो थोड़ी देर इनसे कौतुक करें। (बालकोंसे) बालकगण तुम डरो मत ! अपने आनन्दसे खेलो, पर मेरा एक काम करना होगा, मुझे राजसभा बताय आओ, नहीं मैं पकड़ ले जाऊंगा।

---

* यह स्त्रियोंकी रूढ़ी है कि जहां दो जने लड़ते हों वहां ताली बजाय कह दो कि 'ढेंके बैठे नारद आये' तो लड़ाई बढ़ जाय। नारदका वाहन ढेंकी है।

प्रथम बालक—अरे यह भूत नहीं है मनुष्य है आओ इसे बावला करें।

तृतीय बालक—तुम कौन हो जी।

द्वितीय बालक—अरे यह बहुरूपिया है

प्रथम बालक—(नारदजी की जटा पकड़ कर) अरे यह पट सन है कि जेवरी है। (जटा खींचता है)।

नारद—(वीणा लेकर मारने को उद्यत होते हैं) अरे! अरे! निर्बोध बालक! करत कहा हो? अब ही वीणा मार तोड़िहों हाड़े गोड़।

द्वितीय बालक—अरे चलो भाई! कुछ काम यहां नहीं। यह मारेंगे ढेंको, हम धानसे छुट जायगें।

प्रथम बालक—बाबा जी तुम्हारी यह डाढ़ी धोली धाली। कई एक बालों में है जो नहीं काली।

नारद—क्यों रे बालको! फिर वही बात? अच्छा! पकड़ के लेजाऊंगा तो खबर पड़ेगी बचा!

(पकड़ने को दौड़ते हैं।)

सब बालक (दूर भागकर) हो हो! हो! पागल हो गया हम सब पकड़ नहीं पाये। ढेले मारो धूल फेंको, मार! कैसे मारने को आये।

(सब बालक जाते हैं।)

नारद—आहा मायामय भगवान की अनुपम माया से सब जगत् मुग्ध हो रहा है। कभी बनमें विचरण कर मधुर वंशी बजाकर वृज युवतिओं को मोहन करते हैं। कभी गिरिवर को धारण कर इन्द्रका गर्व हरते हैं। अनन्त वृह्मांड जिनके इङ्गित से परिचालित हैं वही आज स्वयं पुत्र पौत्र लेकर घोर संसारासक्त से हो रहे हैं। आहा कोई क्रंदन करने पर भी तुम्हारा दर्शन नहीं पाता है और किसी के निकट तुम आप क्रंदन करते

हो। प्रभो! तुम्हारी लीला तुम्ही जानो! तुम्हारे चरणों में नमस्कार है।

(जाते हैं।)

द्वितीय गर्भाङ्क।

राज भवन।

(वसुदेवजी विराज रहे हैं।)

(नारदजी का प्रवेश।)

वसुदेवजी—हे देवर्षे! गंगाजलके स्पर्शके समान आपके चरण पड़ने से आज यह पुरी पवित्र हुई। आज हमारा बड़ा भाग्य है। इसीसे परम भागवतों का दर्शन हुआ। मंगलमय! पाद्य अर्घ्य ग्रहण कीजिये? आगमन का कारण वर्णन कर अधीन को कृतार्थ कीजिये।

(नारदजी विराजते हैं।)

नारदजी—वसुदेवजी! मैं आप का आचार व्यवहार विनय विनम्रता देखकर अत्यन्त संतुष्ट हुआ हूं। आप सबका कुशल जानने को और राम कृष्णको देखने को यहां आया हूं।

वसुदेवजी—(एक यादव से) देखो तुम शीघ्र जाकर कृष्ण को यहां बुलाय लाओ।

नारद—नहीं! नहीं! उन को यहां बुलाने का प्रयोजन नहीं है। मैं स्वयं समस्त पुरी को देखता देखता सब को आशिर्वाद करता श्रीकृष्ण के पास जाऊंगा। फिर वहां से आकर अपने मन की बात आप से कहकर तब कहीं जाऊंगा।

(सब जाते हैं।)

तृतीय गर्भाङ्क ।

उद्यान ।

(श्रीकृष्ण और नारद ।)

नारद—चिन्तामणि ! तुम स्वयं निर्गुण और निर्लेप हो महामाया के प्रभाव से गुणमय होते हो । क्या इसीसे अब उसे छोड़ कर निश्चिन्त बैठे हो ? दीनबन्धो ! तुम्हारे प्रेम के प्रभाव में जगत् परि पूरित है । तब न जाने अब यह क्या माया दिखाते हो ? हे करुणामय ! तुम्हारी जिस माया के प्रभाव से ब्रह्मा शिव इन्द्रादिक तेंतीस कोट देवता विमोहित हो रहे हैं, मैं एक सामान्य प्राणी हूं मेरी क्या सामर्थ्य है जो मैं आप की उस माया का अतिक्रम कर सकूं ? तुम मायातीत परब्रह्म हो। इस जगत को कब किस भाव से परिचालित करते हो यह तुमही जानते हो ।

कृष्ण—(हंस कर) नारदजी ये सब लंबी चौड़ी बातें क्यों ? तुम अपने मन की बात कहो ।

नारद—तुम चराचर जगत् के अन्तर्यामीहो क्या मेरे मनकी बात नहीं जान सकते हो ? (हंसकर अच्छा अच्छा जान गया यह भी तुम्हारी एक और माया है । तो अच्छा सुनिये। पीताम्बर ! आपके विरह में प्रकृति अपना स्वभाव परित्याग कर देती है। इसी से ब्रह्माजी ने बड़े व्याकुल होकर मुझे तुम्हारे पास भेजा है। मैंने ब्रज में जायकर देखा वहां आप के विरह में सब मृत प्राय होकर हाय हाय कर रोदन करते हैं।

कृष्ण—नारद जी ! ब्रज की बात मेरे आगे कुछ मत कहो । जो जिस को जिस आंख से देखता है वह उसे वैसाही व्यवहार करता है। उनके वे सब अत्याचार याद कर कर मैं अबतक अस्थिर हूं।

नारद—भूले कहा ? यशोमत माई।

भूले नंद पिता सुख दाई॥

भूले श्रीराधा ठकुरानी।

ग्वालवाल गन सुध बिसरानी॥

कृष्ण—कहो न वृज की बातन (नारद !)

मैं जानत सों मान यशोदे बांधो माखन कारन॥

अबलों देखो व्यथा होत है मेरे कटियुग कर में।

वही पादुका नंद बबा को कितने दिन सिर धर में॥

अलकावली छै गई सारी तातें पगड़ी धारी।

मन में पड़त बात ग्वालन की होत व्यथा अति भारी॥

गायन लिये फिरत हो इत उत बनबन उनके संगन।

मोय खवावत हे फल जूठे चढ़ते मेरे अंसन॥

त्रिगुण धारिणी राधा रानी की कछु कहत न आई।

माया तज जो मोहि भजत थिरतांको देत सुआई।

नारद ! वृज की बात कुछ मत कहो। वृज वासियों की बात कुछ मत छेड़ो। अभिमानिनी पद्मनी का नाम मुख पर भी मतलाओ। एक दिन मैंने चंद्रावली की कुंज में रात्रि यापन की थी। बस राधिका जी को ऐसा दुर्जय मान हुआ कि मेरे छक्के छूट गये। कितना चरणोंमें गिर गिरकर मान मनाया पर तब भी मान भङ्ग न हुआ। अन्त में और कुछ उपाय न देखकर 'दासखत' लिख दिया। कहो नारद जी यह क्या थोरे अपमान की बात है ? बस राधिकाजी की कुछ मत कहो।

नारद—भगवन् ! तब क्या अब आप वृज में न जायंगे।

कृष्ण—नारद जी ! अब मैं वहां नहीं जाऊंगा।

नारद—दीन बन्धो ! तब इस सृष्टि की रक्षा कैसे होगी ?

कृष्ण—नारदजी ! यह किसी अवसर के समय बताऊंगा।

मैं अब एक बेर जाकर इन उपद्रवी बालकों को सांत्वना करूं तुम तब तक पिता के पास जाकर उपाय उद्भावन करो।

(श्रीकृष्ण का प्रस्थान।)

नारद—चक्रीके मनका भाव मैंने तो कुछ भी नहीं समझा। श्री कृष्ण भी वृन्दावन में नहीं जायंगे और श्रीराधिका जी भी ब्रज मण्डल परित्याग कर यहां नहीं आवेंगी। तब श्रीराधाकृष्ण का मिलन किस तरह से होगा। (विचार कर) हां यही ठीक है। वसुदेवजी को समझाकर ग्रहण के उपलक्ष में प्रभास में लेजाकर दान यज्ञ कराऊंगा। और उसी उपलक्ष में त्रिभुवन वासियोंका निमंत्रण करूंगा। इसी उपाय से वृन्दावन वासियों को भी बुलाया जायगा। ऐसा होने से मेरा भी मनोरथ पूरा होगा। तो अब वसुदेवजी के ही पास चलना चाहिये।

(जाते हैं।)

चतुर्थ गर्भाङ्क।

(गृह।)

कृष्ण और नारद।

कृष्ण—नारद जी! तुम ने हमें बड़े झगड़े में घेर दिया। यह छोटी सी तो द्वारका पुरी है! हमारे कुटुम्ब के ही मारे यह 'टलमल' हो रही है। अब यहां किस तरह तुम्हारे कथनानुसार पिताजी के दान यज्ञ का समाधान होगा। हमारी इच्छा है कि हम इस उत्सव में त्रिभुवन का निमंत्रण करें पर ऐसे समावेश का स्थान ही कहां है?

नारद—

सर्वान्तर यामी दामोदर। अविदित कहा जगत में तुम कर।
तउ मेरे मुख सुनवे की मन। जो जानत पद करत निवेदन।

कुरु खेत सब जगजन जानत। वेदहु परम पुनीत बखानत।
सरस्वती गंगाके माहीं। सुंदर तीर्थ प्रभास तहांही।
उपवन सहस्र तपोवन शोभा। चत्वर कुञ्ज देख मन लोभा।
दान यज्ञ उपयुक्त भूमि वह। जाय विश्वकर्मै दीजे कह।
मंडप वेग बनावहि ताकी। दिवस अठारह हैं सधि बाकी।

श्रीकृष्ण—हां नारद जी! वह दानयज्ञ के योग्य स्थान है त्रिभुवन के निमंत्रण का भार तुम ही को है। अनिरुद्ध और शांव को बृह्माजी और शिवजी के निमंत्रण को भेजता हूं। देखो नारद जी! बृजवासियों को निमंत्रण मत करना भला।

नारद—

त्रिभुवन बोलन आज्ञा दीनी, बृज जन बोलन नाहीं कीनी।
हरि! तव भाव समझ नहि आवे, निगमहु तुम्हे अचिन्त्य बतावें।

(प्रस्थान।)

पञ्चम गर्भाङ्क।

गृह

(कृष्ण और रुक्मिनी।)

रुक्मिनी—दयामय! आज आप का यह नया भेव देखकर मुझे बड़ी चिन्ता हो गई है। आप बड़े चक्री हैं। आप ही की चक्र से वंध्यानारी आनंद से पुत्र का मुख दर्शन करती है। और पुत्रवती पुत्र के अभाव से रुदन करती है तुम बड़े छलना मय हो। नाथ मैं आप की चरण धर कर प्रार्थना करती हूं इस यज्ञ के छल से कहीं हमें अनाथिनी न करना।

कृष्ण—प्राण प्रिये! इस यज्ञ में तुम्हारे दुःख का कुछ भी कारण नहीं है। देखो तो नभ मण्डल में नील मेघ की क्या शोभा हुई है। मेरी शुभ कामना पूर्ण होने को ही प्रभास यज्ञ का

आरम्भ हुआ है। चलो तुम प्रफुल्ल चित्त से अपनी सखियों समेत यज्ञ दर्शन करना।

रुक्मिणी—नाथ! नारद का नाम सुनकर मेरा हृदय कांपता है। यज्ञ दर्शन करने को मन नहीं करता है। प्रभो! इस यज्ञके उपलक्ष से क्या अपनी द्वारका को छोड़ेंगे। हाय! मैं बड़े दुःख में हूं कि मैंने चिरकाल आप की चरण सेवाकी पर मन मोहन तुम्हारे मन का भेद न पाया।

कृष्ण—प्रिये! तुम वृथा चिन्ता करती हो। मैं कभी तुम को छोड़ कर नहीं रहता हूं। अब पुरवासिनिओं को लेकर शीघ्र ही प्रभास को चलो। हां देवी तुम्हें मेरी एक बात माननी होगी। पिता के दानयज्ञ में कुवेर को भंडारी किया है। उनके अनुचर गण क्रम से सुमेरु से रत्नमणि ले ले आते हैं। अब उन का कष्ट मुझ से नहीं देखा जाता है। तुम अचला होकर भण्डार में रहो तो फिर कुछ भी अभाव न रहेगा। प्रिये! एक काम और करो। शांब को कैलास भेजदो सो वहां से अन्न पूर्णा देवी को बुलाय लावें। तुम तो रत्न भण्डार में रहना और हरवल्लभा को रसोई में रखना बस फिर तो पिताजी का दानयज्ञ बहुत अच्छी तरह होगा और मैं पंच पांडवों को बुलाने को दारुक को भेज देता हूं।

(दोनों जाते हैं।)

षष्ठ गर्भाङ्क।

कैलास पर्वत पर श्री महादेवजी बैठे हैं।

(शांब का प्रवेश।)

शांब—आहा! देवादि देवके इस पवित्र धाम में आकर मन कैसा प्रसन्न हुआ है। हृदय कैसा शीतल हुआ है। आहा सदा नंद

के प्रभाव से प्रमथ पिशाच गण भी शांत मूर्ति से उन का गुण कीर्तन करते हैं।

(गीत)

जय जय जय पंचानन, जय पिनाक पाणी।
देव देव महादेव, जय त्रिशूल वानी॥
जय जय जय गंगाधर, चंद्र मौलि धारी।
दिग अंबर भुजग भूप अर्द्ध अंगनारी॥

महादेव—आओ! आओ वत्स सांब! आओ। बेटा मैं भिखारी श्मशान वासी हूं तू इतनी दूर से बड़ा परिश्रम कर मेरे पास आया है। मैं जो तुझे उचित आसन देकर तेरा अतिथि सत्कार करूं मेरे पास तो कुछ भी नहीं है। आ बेटा मेरी गोद में आजा। द्वारका का कुशल संवाद कहकर मुझे तृप्त कर।

सांब। प्रभो! आपकी कृपा से द्वारका का सब कुशल है। इस आगामी सूर्य ग्रहण में प्रभास तीर्थ में बाबा वसुदेवजी दान यज्ञ करेंगे समस्त त्रिभुवन का निमंत्रण किया गया है। मैं श्रीभगवान की आज्ञा से आप को बुलाने को आया हूं। और मा रुक्मिणी ने देवी अन्नपूर्णा को बुलाने को बहुत बहुत कह दिया है। आप यज्ञेश्वर हैं आप के गये बिना यज्ञ आरम्भ न होगा। और महामाया अन्न पूर्णा न जायंगी तो त्रिभुवन वासियोंको अन्न देकर कौन तृप्त करेगा! हे आशुतोष! आप मा अन्नपूर्णा को लेकर शीघ्र प्रभास तीर्थ में पधारिये।

महादेव—बेटा! सांब! तेरी मीठी मीठी बातों से मैं बड़ा संतुष्ट हुआ। मैं अपने गण सहित शीघ्र ही प्रभास में जाकर श्रीकृष्ण दर्शन करूंगा। पर बेटा! अंबिका से मैं कुछ नहीं कहूंगा। एक तो वह स्वयं चण्डी हैं। और वैसीही उनके संग की सखी हैं। अच्छी बात पर भी वितंडा करने लगती है। भली बात को बुरी कर डालती हैं। मैं एक बात कहता हूं तो उनको

दासी तक इस बात सुना देती हैं। उनकी दासी ऐसी प्रखरा हैं कि उन्हें लज्जा का तो नाम नहीं है। खड्ग लेकर नितङ्ग नङ्गी त्रिभुवन में घूमा करती हैं। पर त्रिलोकी के जन उनकी सती सती कहकर आदर करते हैं। मेरी प्रारब्ध ऐसी ही है। मुझे मृत्यु भी नहीं है। इसी से ऐसे घरमें पड़ा हूं। मैंने कहा विष खाय लूं पर उससे भी मरण न हुआ। सर्पों को गले में गेरा वे भी भूषण हो गये! भाई मुझे मृत्यु कहां है। इसी से न मेरा नाम मृत्युंजय है बेटा! अब इन सब बातों से क्या है। मैं अब और कुछ नहीं कहना चाहता हूं। बातों बातों में न जाने क्या कह डाला। कहीं दुर्गा सुनले तो मुझे प्राण बचाना कठिन पड़े। बेटा! सांब। तुम पार्वती के पास जाओ। उनका क्या अभिप्राय है सो ठीक करलो। पर देखिये! मैंने जो कुछ कहा है इस का कुछ प्रसङ्ग न आवे।

सांब—माता पिता की लड़ाई में भला बुरा तो कौन जान सकता है। परन्तु देव! बालकको माता का स्नेह अधिक होता है।

(प्रस्थान)

सप्तम गर्भाङ्क।

सांब—(गीत)

अहो शारदा माता वरदा तुम शिव शक्ति विधायन।
अहो अन्नदा अन्न दीजिये! त्रिभुवन अन्न पुरायन॥
जननी मोहिं पठायो माता! तुम्हें लेन के कारन।
चलो प्रभास कृपाकर शिवदे! शिवे! तुरत जगधारन॥

(पट परिवर्तन—कैलासपुरी।)

(भगवती बैठी हैं—दोनों ओर जया और विजयाखड़ी हैं।

भगवती—(गीत)

मन वांछा सब पूरन होगो वत्स तव।
मणिमय आसन नेक बैठ सुत आय अब॥
बिना कहे तुव बात जान लीनो अहो।
बिना शंभु आदेश चलूं कैसे कहो॥
क्रोध रूप से रुद्र कोप कारन बिना।
पांच मुखन सो करत नित्य मम लांछना॥
बार बार मन अनुताप सदा मैं हिय जली।
मूरत कालो भई नाम काली भली॥
नारी पति को दोष कहे कैसे कहीं।
आशुतोष जग कहत तोष मोपर नहीं॥
कहो सांब! यह बात कहीं सुनियत जगत
हैके पति निज नारि नाम जंह तंह जपत॥
दुर्गा दुर्गा रटत सदा शिव फिरत हैं।
सुन सुनके हम वत्स लाज सों मरत हैं॥
जाओ वत्स तुम आशुतोष आज्ञा लहन।
चह नहिं सकत प्रभासे बिना मैं शिव वचन॥

—(शांब का प्रस्थान)

तृतीय अङ्क।

प्रथम गर्भाङ्क।

(वृन्दावन में पूर्णमासीजी का मन्दिर)

(नारद का प्रवेश)

नारद—यह मैंने श्रीवासुदेव भगवान की आज्ञा से त्रिभुवन का निमंत्रण कर दिया। पर मेरा कौशल सफल न हुआ। मैंने

विचारा था। इसी सुयोग में प्रभास तीर्थ में श्रीराधाकृष्ण का मिलन कराऊंगा। किन्तु सो न हुआ! इच्छामय हरि मेरी इच्छा पूर्ण न होने देंगे। नहीं यह क्या बात है कि त्रिभुवन वासियों का सबका निमंत्रण हुआ केवल व्रजवासियों का ही निमंत्रण नहीं। जो हो! इस से क्या। सब का सब ही कुछ होगा। पृथिवी का भार दूर होगा। श्रीकृष्ण प्रकट लीला तिरोधान करेंगे गोलोक में जांयगे श्रीराधाकृष्ण का मिलन होगा। यह सब होगा। पर मुझे राधिका जी को मुख दिखाने को ठौर नहीं है। मैंने व्रजबालकों के आगे, नंदजी के आगे, यशोदा जी के आगे, सखी वृन्द के आगे श्रीकृष्ण को लाय देने की त्रिवाचा भर कर प्रतिज्ञा की थी। अब ये सब जने मुझे घोर मिथ्यावादी समझेंगे। यह मेरा वृथा का अपवाद होगा। इसे कैसे निवारण करूं। (थोड़ी देर मन में कुछ विचार कर) हां यही ठीक है। अपने मनका यह सब दुख देवी पूर्णमासीजी को कह सुनाऊं। देखूँ वे यदि दया करके कोई उपाय कर दें।

(गीत।)

तिमिर वरनि! तारा मा! तीन ताप हरनी।
पड़ी विषम संकट में, तीन नैन धरनी॥
जातें भय छूट जाय, करहु सो उपाई।
सदा नाम हृदय धार, विपद तरत माई॥
महिमानिज नाम की ये, रच्छा कर लीजे।
वेदन मम मन की यह, सकल दूर कीजे॥
मेरे इक मनमें यह, रही साध भारी।
श्याम सो मिलाय देहु, राधा सुकुमारी॥
छाय रही मेरे मन, एक यह उदासी।
दान यज्ञ करि है हरि, तज कै व्रजवासी॥
याही दुख मरो जात, मात दुख हरिये।

तुम ही दुख हरनी मां, मङ्गल मम करिये ॥
विनती यह चरन करत, देहु अभय माय।
मिलहिं श्याम राधा सो, कीजिये उपाय ॥

पूर्णमासी—

तुम मनकी मैं करूंगी पूरन सबरी आस।
करूं निमंत्रण जाय सब ब्रजबासिन के पास ॥

(नारद जी का प्रस्थान)

(पुष्प पात्र हाथ में लेकर वृन्दा का प्रवेश।)

वृन्दा—(गीत)

ए ! मा वरदे लाय मिलावहु हमरे श्याम सवारे।
विनती करत रोय मैं प्रति दिन यही तुम्हारे द्वारे ॥
श्यामा कबलों रुदन करेंगी होत विरह तन छीन।
अब न यातना सही जात यह मात ! भई हम दीन
लाय दीजिये श्याम हमारे विनती यही चरन में।
श्याम सुंदर को देहु मिलाई हम सब पड़ी सरन में।

पूर्णमासी—(गीत)

देख अंधियारी रात नहीं अब रहेगी।
कृष्णचंद्र को उदय हृदय में लहेगी।
सूरज के उपराग दिना परभास में।
होगो यज्ञ रुदान मुकुंद विलास में।
पशु पक्षी नरनार धेनुवत्सन सबै।
एक चित वार देहु चलन कारन अबै।
शतवत्सर श्रीदाम शाप पूरन भयो।
युगल राधिका कृष्ण मिलन आनंद छयो।
वृन्दे करहु प्रचार जाय घर घर यही।
कृष्ण यज्ञ में चलन पूर्णमासी कही ॥

वृन्दा—आज सुनत यह बात भयो आनंद मन।

अनुपम सुख को श्रोत बहत है सर्वांग तन।
दैत यही संवाद घरन में जाय के।
राधा ललिता आदि जसोमति माय के।

(प्रस्थान)

द्वितीय गर्भाङ्क।

नंद मन्दिर।

(नंद और यशोदा का प्रवेश।)

यशोदा—व्रजराज! कृष्ण दान यज्ञ करेगा इस में तुम्हारा अनुराग नहीं है। अब विलंब मत कीजिये। श्री घ्रव्रजवासियों में आज्ञा प्रचार करिये कि कल सब व्रजवासी जन यहां से यात्रा करें। और प्रभास में जाकर मेरे कृष्ण का दान यज्ञ दर्शन करें। आप इस में असंमत मत हूजिये। और यदि मुझे न जाने देंगे तो मैं निश्चय प्राण परित्याग करूंगी।

नंद—व्रजरानी! मैंने लोगों के मुख से सुना है कि प्रभास में सूर्यग्रहण के दिन वसुदेव जी दानयज्ञ करेंगे। यज्ञेश्वर श्रीहरि ने स्वयं उद्योगी होकर त्रिभुवन का निमंत्रण किया है। हमारी अब उन्हें याद नहीं है। इसी से हमारा निमंत्रण नहीं किया है। इसी से मैं यह कहता हूं कि कहीं वहां जाने से अपमान न हो।

यशोदा—व्रजराज! यह भय मत कीजिये। अपने घर के लोगों का कोई निमंत्रण नहीं करता है। हमारा कृष्ण यदि हम को पर जानकर निमंत्रण करता तो हम उसी समय प्राण परित्याग कर देते। चलिये अब वृथा देर मत कीजिये। यदि आप न जांय तब भी मैं जाऊंगी तुम्हारा निषेध न मानूंगी। स्वामी की आज्ञा न मानने से स्त्री को पातक होता है। पर मेरा वह पातक

कृष्ण के मुख देखने से नाश हो जायगा। मुनिपत्नीगण अपने स्वामियों की बात सुनकर यज्ञ की अग्रभोग्य सामग्री सब लेकर यज्ञ छोड़कर यज्ञेश्वर के निकट गई थीं पर उन को सबकी ही सद्गति भई थी। और उन के पुण्य से उन के स्वामियों की भी सद्गति हो गई थी। स्वामिन् अबमैं नहीं अवस्थान कर सकती हूं।

नंद—मैं तुम को प्रभास में जाने को नहीं रोकाता हूं मेरी भी वहां जाने की इच्छा है। परन्तु

यशोदा—परन्तु क्या ?

नंद—यदि द्वारपाल भीतर न जाने दें तो यह अपमान मुझ से न सहा जायगा। उसी समय फिर हमें प्राण परित्याग करने पड़ेंगे।

यशोदा—गोपराज! कृष्णके बिना प्राण रखने से क्या प्रयोजन है। कृष्ण के दर्शन को जाकर प्राणों का पतन होना ही अच्छा है। (ऊपर दृष्टि कर) यह क्या! यह क्या है! यह तो मेरा लाल आ गया। आ बेटा! मैंने बहुत दिन से तेरा मुख नहीं देखा है। तैंने बहुत दिन से मुझे मा कहकर नहीं पुकारा है। अरे गोपाल रे। तेरा मुख क्यों सूख गया है? ऐं क्या कहा बेटा! बहुत दिन से तैंने कुछ खाया नहीं है। अरे मेरे लाल! आ मेरी गोदी में आजा। एक बेर चंद्र मुखसे मा कहकर बोल बेटा! मैं अभी तुझे नवनीत लाये देती हूं। देख बेटा! जब से तू ब्रज से गया है। तब से मैं दधि मंथन करने के घर में नहीं जाती हूं। न माखन निकालती हूं। न दूध औंटती हूं, न मलाई उतारती हूं ठहर जा बेटा! तेरे लिये माखन लाती हूं।

(दौड़कर बाहर जाती है।)

नंद—क्या विषम उत्पात है। ब्रजरानी नितान्त उन्मत्ता हो गई है। इन को प्रभास में सब न देखने जाने देने से कुछ भी फल न होगा। पर यह निश्चय है कि वहां जाने से हमारा अपमान

होगा। विपद होगी। प्राणान्त भी हो जाय तो हो सकता है। कृष्ण! तू एक बेर आकर देख तो जा तेरी मा की क्या हो रही है।

(माखन हाथ में लेकर यशोदा का प्रवेश।)

यशोदा—गोपाल कहां है कहां गया मेरा गोपाल! ब्रजराज मेरा गोपाल कहां है। अभी तो मेरा गोपाल आया था! अभी त मुझे मा कहकर पुकारा था। मैं उसके लिये माखन लाने गई थी। ब्रजराज बताओ तुम ने मेरे गोपाल को कहां छिपा दिया? बुलाय दो। तो मैं प्रभास में न जाऊंगी। मुझे यज्ञ से क्या है मेरे यज्ञेश्वर को लाय दो!

नंद—रानी! धैर्य धरो तुम्हारा गोपाल आया है हम सब को प्रभास में ले चलने को स्वयं आया है। मैं भी अभी मेरो घोष कराये देता हूं। समस्त ब्रजवासियों को एकत्र कर कलही हम सब प्रभास जाने को तयार होंगे। ब्रजरानी! तुम जाकर अपने सब परिजन से कह दो। मैं नगर वासियों को संवाद भेजता हूं।

(दोनों दोनों ओर जाते हैं)

—:०:—

द्वितीय गर्भाङ्क।

उपवन।

(श्रीराधिका जी आती हैं और पीछे पीछे गीत गाती गाती सखियां आती हैं)

सखी गण—

अब क्यों कहत दुखी, मैं प्यारी!
हरि प्रभास आसैं कतु छल कर,
ब्रज तें तुम चलने की त्यारी।

हेरत जलधर कहुं चात की,
कहौ विषादित होत विचारी।
चलो तुरत जाहित पागल सो,
हेरहिं सो अब वंसी धारी।

राधिका—(गीत)

सजनी ! आज कौन सुख मोमन।
मगन भई मैं सुख के सागर।
व्रज सूनो कर गये व्रज जीवन,
आये नहीं बहुरि व्रज नागर।
वृन्दा विपन मिलन श्रीहरि सों,
मेरे मन आशा अति भारो।
सुनत प्रभास नाम अभिलाषा,
मन की सो सब दई बिसारी।
जानि परत वृन्दावन लीला,
पूरन भई मोहि अब आली।
आप न मिले हाय ! जमुनातट,
कुंजन माहिं सखी ! वनमाली !

सखी ! मुझे जान पड़ता है श्रीहरि अब अवनीतल को प्रकट लीला संवरण कर, शीघ्र ही गोलोक धाम को पधारेंगे। परन्तु मैं तो अब अभिमन्यु की स्त्री हूं स्वामी की अनुमति बिना कैसे जाऊंगी।

वृन्दा—तुम ब्रह्ममयो हो ! तुम्हारी माया से ब्रह्मादि देवगण मोहित हैं अभिमन्यु को भुलाना क्या कठिन है। हां अब उस की गृह लक्ष्मी रूप से उस के घर में हो इसी से उसे छोड़ कर जाने में कुछ ममता होती है।

राधिका—उस ने सात जन्म घोर तपकर मुझे पाया है भला ममता कैसे नहीं ! पर अब उसे माया से मोहित कर रखना

उचित नहीं है ? अब उसे दिव्य ज्ञान देकर मुक्ति कर देना चाहिये। सखि ! मैं जायकर अभिमन्यु से अनुमति ले लूं।

(सब का प्रस्थान)

चतुर्थ गर्भाङ्क।

क्रोध भवन।

(बलदेव जी शयन कर रहे हैं)

वसुदेवजी का प्रवेश।

वसुदेव जी—

कहाँ वत्स बलराम राम कितमें गयो ?
भयो कहा यह, कहा आज अनुचित भयो।
हाय ! रजित गिरि धूलि धूसरित गात क्यों ?
विधना सुखके दिन न दुःख की बात क्यों ?
मंगल के दिन आय अमङ्गल भयो यह।
हल धर मेरो सरल ! हृदय की बात कह।
है काहे को नाम कपट जानत नहीं।
उत्सव के दिन क्रोध भवन पथ क्यों गहो।
लोटत हो क्यों धूलि माहि बालक सदृस।
कहो कहो बलराम भये क्यों क्रोध वस।
अति आंधी को वेग उच्च पर्वत सहत।
बड़े वृक्ष के अंग आय बड़झाड़ लगत।
हो हलधर तुम बड़े पुत्र मम वंश में।
है सब कारज भार तुम्हारे अंस में।
है प्रभास को यज्ञ तुम्हारे गेह में।
तोषो सबन सहाय बात सब नेह में।
उचित न बेटा बास क्रोध आगार है।

अभ्यागत तिहुं भुवन तिहारे द्वार हैं।
पूछत आवत जोइ सोई तुम बात हैं।
बिना तुमैं लखि भोज इष्णि अकुलात हैं।
इत उत खोजत फिरत तुम्हें सब बंधु जन।
करहु छमा अब समुझि निवारहु क्रोध मन।
होय प्रफुल्लित चित्त सबनि भाषण करो।
राख्न पिता की बात यथापथ अनुसरो।

बलराम—

पिता करहु अनुरोध इथाहीं।
मैं न चलत चाहत क्रतु माहीं।
तुम सम्बन्ध प्रीत नहिं मानत।
न कछु बंधुता हित नहिं जानत।
जंह मानी जन मान न पावैं।
हम पितु ! तहां जान नहि चावैं।
तीनहु भुवन निमंत्रण दीना।
क्यों व्रज वासिन वर्जन कीना।
तुम प्रिय बंधु नंद महाराजा।
कहा दोष तिनकर यदुराजा ?
पाय कंस भय हम दोउ भाई।
तिन घर तुम राखे जदुराई।
स्याम राम दोउ तिन घर पालित।
अधिक मात पितु ते दोउ लालित।
तिनकी अन्न देह यह बाढ़े।
त्रिभुवन नेह न ऐसे गाढ़े।
भूले सो व्रजराज निमंत्रन।
कहि हैं कहा त्रिलोकी के जन ?
जसुमति सो मा त्रिभुवन माहीं।

कबहुं कहीं देखी किन नाहीं।
मोहिन कृष्ण और नहिं जानत।
ताहि न यज्ञमाहिं तुम आनत।
कबहुं पिता को तिन अपराधा।
निस दिन कृष्ण प्रेम जिन साधा।
तासु खबर कबहुं नहिं लीनी।
कैसी कृष्ण अनीती कीनी।
यह कछु मैंने जान न पाई।
बात मरम की नहीं लखाई।
छोड़ एक एक न समझावन।
क्रोध भवन मधि कियो निवासन।

वसुदेवजी—

यह त्रिभेद कछु हम न जनाई।
वत्स! कृष्ण सोहि कियहु मनाई।
कारन निमंत्रण व्रजवासिन के।
मरम न मैं जाने तिन मन के।
अबहि कृष्ण को ग्वाल बुलावत।
पूछ तुमैं सब भेद सुनावत।

(कृष्ण का प्रवेश।)

कृष्ण—

वाह! वाह! निश्चिन्त आय बैठे महाराज!
मैया और तुम हूं निवृति में बैठे आज।
त्रिभुवन वासी लोक सकल तुम्हरें घर आमें।
मैं इकलो कहु सबन समादर किमि कर पामें।
है यह जिन को काज सोई तंह दीखत नाहीं!
सब कोई पूछत आय कहो हम काहा बताहीं!

भैया यदुकुल मुकटमणी आरज इत भारी।
बैठे आज निचिन्त होत यह अचरज भारी।
जो पै मन यह हतौ तुम्हारे दो जन केरे।
प्रथमहिं कर उद्योग भुवन क्यों हला गेरे।
नारद दियो पठाय निमंत्रण करन त्रिलोकी।
अब आरम्भहिं आय बात सबरी क्यों रोकी।

बसुदेव जी—

हाय कृष्ण तुम आज कौन कारज यह कीनौ
ब्रजवासिनकों यज्ञ मांझ नौतौ नहिं दीनौ।
तुमरे मन की बात कछू मैं जान न पाई।
क्यों नारद तें करी निमंत्रण करन सुनाई।
ब्रज वासिन को कौन दोष तुमरे मन आयौ।
कहो कृष्ण कै कछू तुम्हारे मन भ्रम छायो।
त्रिभुवन में या बात होयगी अपयश भारी।
कहैं हमैं अज्ञातज्ञ करैं निन्दा नर नारी।
चक्रपाणि ! तुम लखहु क्रोध आगार बलाई।
रोदन करकर धरनि धूल लोटत दुख पाई।
बिना गये बलराम कहा करिहैं हम जाई।
मोहिं प्रयोजन यज्ञ दान काहू तें नाई।

कृष्ण—

हो भैया ! तुम परम चतुर पण्डित गुन मानी
बालक कौसी करत कहाहो यह नादानी।
अपने घरके जननं कहुं कोउ नौत बुलावत।
घरके जन सब काज देखके आपुहि धावत।
सदा निमंत्रण कियो जात जो लोग पराये।
घरके घर में करत काम सब बिना बुलाये।
जैसे हम तुम सबै तथा व्रज के व्रज वासी।

निज सम दूजो नहीं हमारो कोउ विश्वासी ।
यही समझ मैं देन त्रपी को कीनो नाहीं ।
ब्रजवासिन को करन निमंत्रण मुनि जिन जाहीं ।
जो कहुं ब्रज में जाय निमंत्रण करते नारद ।
होतो विषम अनर्थ जानिये बुद्धि विसारद ।
न्योते परजन जान नहीं निज जनता इस सन ।
तजते ब्रज जन प्रान तुरत सब यही समझ मन ।
ब्रजवासिन के हेतु रच्यो सुंदर आवास ।
बारह ऋतु चौबीस द्वार तोरण के पास ।
ब्रजवासी जन सबै अवस आसिंगे भाई ।
उन की चिन्ता करहु न कछु हलधर सुख दाई ।
दादा आवहु उठहु सबन संग भाषण कीजे ।
जैसे जाको रूप ताहि आदर सो दीजे ।
अभ्यागत अपमान जान कहुं फिर नहिं जासें ।
बिना तुम्हारे यहां सबै अतिशय दुख पासें ।

बलराम—

अति विचित्र तुम कौशल भाई । यह मायाको बूझ सकाई ।
मैं संतोष भयो मन माहीं । चलहु प्रसन्न यज्ञ मधि जाहीं ।

(सब का प्रस्थान ।)

चतुर्थ अङ्क ।

प्रथम गर्भाङ्क ।

(प्रथम तोरण द्वार—दो द्वारपाल खड़े हैं ।)

प्रथम द्वारपाल—देख भाई ! बड़ी सावधानी से पहरा देना ! देख ! श्रीकृष्ण की आज्ञा बिना कोई पुरी में प्रवेश न कर सके ।

दूसरा द्वारपाल—अरे ! देख ! भाई ! नेक देखतो ये कई कैसे सुंदर सुंदर लड़के बछड़े गोद में लेकर नाचते नाचते इधर चले आते हैं। ओः ये तो दंगल बांध कर इधर को आते हैं। हुसियार हो जाओ भाई ! इन को रोकना। नहीं ये झट से भीतर चले जांयगे।

(वछ गोद में लेकर बालकों का प्रवेश)

प्रथम द्वारपाल—अरे ! लड़कों ! यहां आकर क्या करोगे ? यह दान की जगह नहीं है। इधर अगाड़ी बढ़ जाओ। वहां बहुत कुछ मिलेगा साल ! यहां क्या रक्खा है। यहां देवता हैं, ऋषि हैं, मुनि हैं राजा हैं बड़े बड़े सेठ हैं। यहां तुम लोगों का काम नहीं है। जाओ हट जाओ !

प्रथम बालक—द्वारपाल ! हम को धन नहीं चाहिये। हम कृष्णचंद्र को देखने को आये हैं।

द्वि० द्वारपाल—आज चंदा नहीं निकलेगा देखेगा कहां से ! आज अमावस है। जाओ घाट किनारे जाओ वहां अखाड़ा देखना। स्नान देखना। भीड़ भाड़ देखना। वहां मजा देखना। जाओ ! ग्वाल सब वहां चले जाओ !

गोप बालक—

नील गगन दिवस नाथ हम नित प्रति देखत।

याहां ? लाल आनंद हमें-हरजग्रह पेखत।

छांड़ गये श्रीकृष्णचंद्र अंधियारो हिय में।

ब्रज तज आये यहां आसतिन देखन जिय में।

प्रथम द्वा०—अरे हां ! कृष्णचंद्र देखोगे। तुम ने ऐसा क्या पुण्य किया है। जो कृष्णचंद्र को देखोगे ? बड़े बड़े ऋषी मुनी ध्यान में भी जिन का दर्शन नहीं पाते हैं तुम ग्वालों के लड़के उन्हें देखोगे ? जाओ ! जाओ यहां से हट जाओ ! हट जाओ।

(बालक गण भीतर जाना चाहते हैं।)

द्वितीय द्वारपाल—अरे दुष्ट मानते नहीं हो? जोर जुलम करके भीतर जाना चाहते हो। ऐं! अभी काट कर पैंडा पैंडा कर दूंगा।

सुबल—इतना अपमान! यह तो नहीं सह्य होगा। आओजी! इन द्वारपालों को मार कर हम श्रीकृष्णचंद्र को देखेंगे!

श्रीदाम—नहीं भाई! ऐसा मत करो! हमारे प्यारे कृष्ण के मन में कष्ट होगा। इस झगड़े में दान यज्ञ सब भंग हो जायगा। भाई! रागद्वेष अभिमान अहंकार तम मोह छोड़ देंगे तब न श्री कृष्ण दर्शन होगा?

प्रथम द्वारपाल—जाओ जाओ लड़को भागो। कृष्णचंद्र तुम्हारे कौन हैं जो तुमें दर्शन देंगे!

गोप बालक गण—(गीत)

राजा तुम्हारे! राजा तुम्हारे!
रे द्वारी! सोसखा हमारे!
धेनु चरावत फिरत वनवन,
मोर पखा बंसी कर धारे।
छोड़ छोड़ हट हट जा! द्वारी!
प्राण कृश से करें नजारे।
लै न जायंगी हम वृन्दावन;
देख जाय मोहन इक बारे।
कहां कान्ह राज तुम हो काहे?
सये विपद सैयन्त सखारे।
सुमरत तुम्हें विपद सब टारी।
हाय! प्रान-हारीन सहांरे। (सब जाते हैं)

———o———

द्वितीय गर्भाङ्क।

(दूसरा तोरण द्वार, दो द्वारपाल बैठे हैं।)

प्रथम द्वारपाल—आहा हा ! देखो भाई ! ये कैसी कई स्त्रियें इधर आती हैं। आहा ! इनका वेश तो मलिन है पर रूप माधुरी कैसी चमत्कार है !

दूसरा द्वारपाल—देख भाई ! इन सब में इस बीचवाली का कैसा चमत्कार रूप है। जाने भभूत लगा कैलास से साक्षात् सा भागवती चली आई हैं। मेरा जी ऐसा होता है कि जायकर इस के चरणों में माथा धरकर दण्डवत् करूं।

प्रथम द्वारपाल—सुन तो ये कैसा सुंदर गीत गाती हैं।

(सखियों के साथ श्रीराधिकाजी का प्रवेश)

श्रीराधा—(गीत)

हम सखी ! श्याम दरस नहिं पावैं।
ये देखो सब ग्वाल बालगन बिन दरसन फिर आवैं।
युग युग योग करत शिव ब्रह्मा, आवत नाहिं हरि ध्यान।
आये ब्रज छांड़ि गृह, आशा करि हेरन की ठान।
करिहैं नयन सफल हरि हेरि चाव यही मन माहीं।
द्वारपाल नगरी के भीतर जान देत हा ! नाहीं।
कहें कितिक गोप द्वारे पैं, द्वारिन-ठौरे रोय।
हाय ! पती अब आज्ञा दीजिये हमें द्वारिका लोक।

प्रथम द्वारपाल—कौन छोरी तुम कौन हो ? यहां मेला ठेला के दिन में बिन हुकुम के तुम सब क्यों आई हो ? चलो। यहां हल्ला-गुल्ला मत मचाओ। जाओ पहले देखो गङ्गा स्नान करो ! चलो !

सखीगण—अरे भाई ! हम सामान्य ग्रहणस्नान देखने को नहीं आई हैं। हमारे हृदय के धन श्याम चंद्र [illegible] हो गये हैं। उन्हीं देखने को आई हैं।

प्रथम रक्षक—अरे ! तुम सब क्या नीन्द की घुमेर में सपना देख रही हो ? जाओ ! जाओ ! अपने घर को लौट जाओ ! नहीं, कोई पागल समझ कर धूल मिट्टी फेंकेगा।

प्रथम सखी—अरे द्वारपाल ! जिस दिनसे क्रूर अक्रूर हमारे वृन्दावन चंद्र को हरकर ले आया है उस दिन से क्या हमें निद्रा आती है जो स्वप्न देखेंगी ? उसी चिन्ता से तो हम पागल होकर वृन्दावन से धुलिशैय्यापर शयन करती हैं अब तू और धूल का क्या भय दिखाता है ?

प्रथम रक्षक—तुम क्या कहती हो हम कुछ नहीं समझते हैं तुम्हारा ढंग डौल देख कर यह जाना जाता है कि तुम कोई जादू गरनी हो। छल करने को आई हो। विना परिचय दिये यज्ञ में नहीं जाने पाओगी।

द्वितीय सखी—अरे दह मारे ! यह जो त्रिभुवन के लोग यज्ञ देखने जाते हैं क्या इन सब को परिचय लेलेकर ही जाने देता है जो हमारा परिचय लेगा ? हम बनमें रहती हैं दुखिया हैं यज्ञ देखकर चली जायगी। इतना झगड़ा क्यों करता है।

प्रथम सखी—अरी ! जानती नहीं है ये बांके के चाकर हैं ना इसीसे इस की बात में इतना बांकापन है।

द्वितीय द्वारपाल—मर तेरे का ! मर तेरे का ! इधर कहती हैं हम दुखिया हैं और यह तेहा है कि जो चाहती हैं सो बकती हैं।

प्रथम द्वारपाल—अरे हटादे इनको ये चोर हैं।

तृतीय सखी—अरे बन मारे ! हम चोर हैं कि तुम्हारा राजा चोर चूरामणि है। वृन्दावन में बहुत दिन चोरी करता होता है। वहां माखन चोरी करता था वस्त्र चुराता था। अब अन्त में गोपियों के प्रान चुराकर यहां भाग आया है। हम चोर नहीं हैं चोर पकड़ने को आई हैं हट शीघ्र द्वार छोड़ दे। अब

हम देखेंगी कि तुम्हारा चोर राजा क्या यत्न करके साधु होता है।

द्वितीय रक्षक—यह क्या ! तुम्हारा छोटा मुंह बड़ी बड़ी बातें कृष्णचंद्र चोर ! जिन के इङ्गित से सृष्टि स्थिति प्रलय होती है।

वृन्दा—अरे इंगित से जो सृष्टि स्थिति प्रलय होती है सो किस की शक्ति से रे ! वह माखन चोर, चित चोर की निज शक्ति से है पर वह शक्ति कहां है वह भी हमारी ब्रह्ममयी सत्य सनातनी आद्या शक्ति श्रीराधिका जी की शक्ति से है। चोर को चोर कहने में क्या डर है रे ! हम यदि एक बेर देख लें तो फिर देखा ! क्या करें। यदि हमारा राजा कहे तो हम तुम्हारे राजा को अभी बांध कर अपने घर ले जांय।

प्रथम रक्षक—हां ! ऐसा घमण्ड इतना साहस ! कुछ भी भय नहीं है। जो मन में आता है सो ही बकती है। मार मार ! (मारने को दौड़ता है)

दूसरा रक्षक—अरे हैं हैं ! यह क्या करता है मुंह से डर दिखा। मारना मत ! मारना मत !

वृन्दा—अरे ! मूढ़ ! जो अस्त्र से विद्ध नहीं होती हैं अग्नि से दग्ध नहीं होती हैं जल में डूबती नहीं हैं तू उनको मारने को उद्यत होता है ! अहंकार में मत्त हो रहा है मृत्यु से भी भय नहीं है। बिना बात सर्प के मुख में हाथ देता है। अग्नि में गिरता है। जानता नहीं भस्म होकर यमलोक को चला जायगा। अरे ब्रह्मादि देवगण शतशत युग पर्यंत तप कर कर जिन का चरण दर्शन नहीं पाते हैं। तुम्हारे राजा श्रीहरि आप जिन का चरण पकड़ते हैं उन आद्या शक्ति श्रीराधिका जी को बिना बात मारने को उद्यत हुआ है। (क्रोध दृष्टि से देखती है)

श्रीराधिका—(अपने दोनों हाथों से वृन्दा के दोनों नेत्र ढकती हैं) हैं ! हैं ! हैं ! वृन्दे ! यह क्या करती हो क्रोध का समय नहीं है। हम तुम क्रोध करेंगी तो त्रिभुवन दग्ध हो जायगा। यह

द्वारपाल कौन तुच्छ है। सखि! क्रोध संवरण करो! नहीं कृष्ण का यज्ञ नष्ट हो जायगा। हमारी कृष्ण दर्शन की आशा भी नाश हो जायगी। आओ! हम सब मिलकर दीनता से काय मन बाणी से उस दीन बंधु को पुकारते हैं देखो उस का दर्शन होता है कि नहीं।

(वृन्दा और राधिका दोनों गान करती हैं)

दीन बंधु दीन-नाथ दीजिये दरस।
देखे मुख चंद बिना जी रहा तरस।
तन मन धन प्रान सभी अरपन तुम कीना,
प्यारे अब देहु तनक पाद युग परस।
आई हैं आशा कर देखवे तुम्हें,
यहां मिले द्वारिन के बचन शर परस।
तजत प्रान विरह विकल गोपिका हरे!
आप मिल पियारे! मन कीजिये सरस।

(सब का प्रस्थान)

तृतीय गर्भाङ्क।

दो द्वारपाल खड़े हैं।

प्रथम रक्षक—यह अब फिर क्या बवाल है। ये अब के कौन आये? कई बुड्ढे बुढ़िया रोते रोते इधर चले आते हैं।

द्वितीय रक्षक—देख तो ये इन के संग एक कैसा सुंदर बालक है ठीक हमारे राजा जी के सरीखा है। अच्छा चलो हम ओरा आगे चलकर देखें ये यहां आय कर क्या करते हैं।

(दोनों दूसरी ओर ओट में जाते हैं)

(नन्द बाबा उपनन्द यशोदा और श्रीदाम आदि का प्रवेश)

उपनंद—महाराज! अब तो यह अपमान सहा नहीं जाता है। द्वारपालकोंके दुर्वाक्यसे नाकमें दम आ गया है। बेंतोंसे शरीर चत विचत होगया है। हाय! हमें व्रजदुलारे एक दम भूलही गये हैं। नहीं इतना पुकारते हैं, इतनी बिनती करते हैं पर एक बेर हमें दरसन भी तो न दिये। हाय! जो हरी हमारे बिना और कुछ न जानते थे कितनी बेर कितने विकट संकटोंसे हमारी रचा की थी, जिनके लिये दिन रात रो रो कर हम अन्धे हो गये हैं, जिन के देखने को हम सब व्रज छोड़ कर यहां इतनी दूर प्रभासमें आये हैं उन्होंने एक बेर हमें आंखसे भी न देखा। इतने पुकारते हैं पर एक भी पुकार उनके कान तक न गई। हे विधाता! तुम्हारे मनमें क्या यही थी। कृष्ण जी हमसे ऐसा निठुर हो जायगा यह हम स्वप्नमें भी नहीं जानते थे। महाराज! अब तो मुझसे पुकारा नहीं जाता है। शरीर सन्नाटेमें आता है। प्राण कंठमें आगये हैं। (माथे पर हाथ धर कर बैठ गये) अच्छा आप एक बेर और पुकारिये! देखिये अबकी उत्तर देता है कि नहीं।

नन्द जी—व्रजरानी! मैं ने तबहीं तुमको नाहीं की थी पर तुम ने मानी नहीं, प्रभासमें आनेको विह्वल हो गई। हाय अब क्या उसे हमारी याद है। जब मैं गोपाल को संग लेकर कंसके धनुष यज्ञमें मथुराको चला था, तबही भीतर से मेरा हृदय कांपा था, तभी मैंने जाना गोपाल हमसे जुदा होगा। हाय जब गोपालने दुष्ट असुर को मारकर समझा बुझाकर हमको व्रजको बिदा किया था उस समय मेरी क्या दुर्दशा हुई थी, वह सब याद करते छाती फटती है। मैं उस समय चारों ओर अन्धेरा देखता सूने मन सने प्राणसे सूने व्रजको फिरा था, जो गोपाल हमारा होता तो क्या उस समय इस तरह से हमें बिदा करता? फिर जब हम तुम अन्न जल छोड़ कर दिन रात धूलमें पड़े पड़े कृष्ण के लिये रो रो कर अन्धे हो गये और तब भी उस ने हमारा दुःख न

जाना हमें याद न किया, हमें देखनेको भी एक बेर न आया. हमारी कुछ बात न पूछी तब ही मुझे निश्चय हो गया कि वह हमें भूल गया है। ब्रजकी बात उसे एक बेर भी याद नहीं आती है। प्रभासके यज्ञमें त्रिभुवनका निमंत्रण किया पर हमें तो झूठ सचको भी न पूछा, तुम्हारे कहे से यहां गोपालको देखनेको आकर आज हम सबको द्वारपालोंसे अपमानित होना पड़ा। बस अब क्या है यही बहुत है अब फिर शून्य प्राण शून्य मनसे धीरे धीरे घरको लौट चलो।

यशोदा—ब्रजराज! यदि इतना सब होकरभी हम अपने प्राण कृष्णको न पावें, तो कृष्ण शून्य अन्धेरे ब्रजमें अब फिर कार किस सुखके लिये चलेंगे? हम तो यहीं प्रभासमें कृष्ण कृष्ण कह कर गंगा में प्राण तज देंगी। तब तो फिर जगतमें उसे कोई दयामय कह कर न पुकारेगा। हा व्रजराज! हम जब अपनी आंख मींच कर ध्यान करते हैं तबही गोपालका दर्शन पाते हैं। वह हमें कभी नहीं भूला है। हमारी प्रारब्धके ही दोषसे उसका साक्षात् नहीं होता है। तुम फिर एक बेर उसे अच्छी तरह पुकारो तो सही चाहै तो अबके वह आ जाय।

नंदजी—अच्छा देखूं एक बार पुकार देखूं। अबके भी सुनता है कि नहीं। लाला रे! कहां है रे! नन्दकुमार! अरे बेटा! एक बेर आकर हमारे मनको सन्तुष्ट करजा, तू हमारा सर्वस्व धन है। तेरे सिवाय हम और कुछ नहीं जानते। तू मिल जायगा यही विचार कर हम इतनी दूर प्रभास में बिना निमंत्रण आये हैं। हे हरि! इतना कष्टकर मार्गकी दुर्गति भोगकर तुझे देखनेको आये हैं। तौभी तू न मिलेगा? प्रखर सूर्य्यकी किरणसे शरीर झुलसा जाता है; कांटोंसे पांव लोहू लुहान होगये हैं, प्यास से गला सूख गया है। होठों पर पपरी पड़ गई है। पर यह सब दुःख हम कुछ भी नहीं गिनते हैं। किन्तु बेटा! ये द्वारपाल जो

यहां यज्ञ में ढेर धन रत्न दान होंगी तुझे चाहिये तू मांग लीजो। और हमारे यहां सुगन साथ मैया तू ऐसे रोवे मत।

यशोदा—द्वारपाल! मेरा वह रत्न अमूल्य है सबरे संसार में उस के समान नहीं है। तू प्रभास के रत्नों को क्या कह रहा है। बेटा! मेरे उस रत्न के मिलने को ब्रह्मा शिव इन्द्रादिक देवगण भी कितने युगों तक तपस्या करते हैं। मुनि जन मेरे उस रत्न को ध्यान में भी नहीं धारण कर सकते हैं। द्वारपाल! मैंने बड़े लतन से बड़े कष्ट से बहुत तपस्या कर उस अमूल्यधन नीलरत्न को पाया है।

प्रथम रक्षक—क्योंरी! तेरा ऐसा अमूल्य रत्न है तो बता उस की चमक दमक कैसी है? हम ढूंढेंगे हमारे भण्डार में वैसा रत्न है कि नहीं।

यशोदा—मेरे रतन की जोति का एक कण लेकर कोटि कोटि सूर्य चमक कर अनंत कोटि ब्रह्माण्डों को प्रकाश कर रहे हैं।

द्वितीय रक्षक—अरे! ये पागल है रे पागल! इस के संग वृथा बकवाद क्यों करता है। (यशोदा से) अरी जारी! तू जा उधर को अपना रतन ढूंढले हम नहीं समझे हैं तू क्या कहती है।

यशोदा—द्वार पाल! मैं हाथ जोड़ती हूं तुम नेक ठैर जाओ मैं और एक बेर अपने मन का दुख तुम्हारे राजा को सुनाय लूं।

(गीत)

मोय दुःखिनी माय जानके दरस न देगो लालन।
जदुमणि निरधन को धन कहि कहि टेरत तोय जग पालन।
आउ वत्स! तोहि गोद लेलऊं शीतल करहु पिरानन।
बिन देखे जिय जात कठिन अब बचवो इन अपमानन।

द्वार पाल—जा! जा! बक बक मत करो यह रोना झींकना यहां नहीं चलेगा।

प्रथम गर्भाङ्क ।

यज्ञशाला बाहर बड़ा द्वार ।

(मंच पर देवता, गंधर्व, यक्ष, राक्षस, मुनि ऋषि महादेव, ब्रह्मा, राजा गण—नीचे गर्ग; बसुदेव, कृष्ण बलराम, यादव गण और नारद जी ।)

गर्ग—दान यज्ञ का समय उपस्थित है । अब विलंब करना उचित नहीं । सब की संमति लेकर कार्य का अनुष्ठान करना चाहिये ।

बसुदेव जी—जो आज्ञा देव ! (बलदेव जी से) राम ! बेटा ! तुम सब से पूछ कर संमतिलो मैं दान यज्ञ में व्रती होता हूं ।

बलराम—जो आज्ञा महाराज । (और सब से) हे देवादि देव ! सर्व यज्ञेश्वर ! दिगंबर ! हे भगवन् कमल योने ! हे सुरपति ! हे देवगण । हे यक्षराक्षस दानवगण ! हे समस्त त्रिलोक वासी-जन ! आप सब जने अनुमति दें तो हमारे पिता दानयज्ञ में व्रती होंय ?

सब जने—हां हां ! सूर्यराहुग्रस्त हो गये दानयज्ञ का यही उत्तम समय है । शीघ्र कार्य आरंभ कीजिये ।

बसुदेव जी—बेटा ! कृष्ण तुम शीघ्र जलकी झारी ले आओ ।

कृष्ण—जो आज्ञा ।

(प्रस्थान)

सब जने—ग्रहण लग गया । ग्रहण लग गया । वह देखो ईशान कोण से लगा है ।

(नेपथ्य में शंख घंटा बाजे बजते हैं । दो द्वारपालों का प्रवेश)

प्रथम द्वार पाल—अरे वह पागलों का झुंड आया। इन्होंने तो हमें तंग कर डाला है। जी जला डाला है हटा दे! हटा दे!

द्वितीय द्वार पाल—अरे जहां त्रिलोकी के सब लोग इकठ्ठा हैं वहां हल्ला का क्या ठिकाना है। इन को हल्ला करने दो! ये भी अपना डेढ़ चावल का भात रांधते हैं। हो हल्ला का क्या है। भीतर न घुसने पावें और क्या? चलो हम भी थोड़े आगे बढ़ कर यज्ञ देखलें।

(दोनों जाते हैं)

(यशोदा। धनिष्ठा। और नंद महाराज का प्रवेश)

यशोदा—सखि! धनिष्ठे! इतना कष्ट भोग कर भी तो मैं अपने लक्ष्य धन को न देख सकी द्वार पालों ने किसी तरह से भीतर न जाने दिया। अरी अब मैं क्या करूं? मेरे तो प्राण निकसे जाते हैं। शरीर सन्नाटे में आ गया है। हाय मैं गोपाल को न देख सकी। अरी मैं तेरे हाथ जोड़ती हूं तू किसी उपाय से एक बेर मेरे गोपाल को दिखाय दे।

धनिष्ठा—व्रजरानी रोओ मत! एक बेर सस्नेह भरसे अपने गोपाल को पुकारो तो देखूं? व्रजमें जैसे क्षुधा के समय व्यस्त होकर पुकारती थीं, देखें एक बेर उसी तरह पुकारो तो। वह अभी यहां आय जायगा। वांछा कल्पतरु तुम्हारी वांछा पूर्ण करेगा।

यशोदा—अरी धनिष्ठा! ब्रज में तो गोपाल मेरे पास रहता था। पुकारते ही झट सुनलेता था। और मेरे पास दौड़ा आता था। यहां तो गोपाल बहुत दूर है। तिस पर त्रिलोकी के मनुष्यों की भीड़ भाड़ का हो हल्ला है अब क्या पुकारे से गोपाल सुनेगा जो आवेगा?

धनिष्ठा—मैया! तेरा गोपाल क्या साधरण बालक है जो न सुनेगा, मैंने बड़े बड़े ऋषियों के बड़े बड़े मुनियों के मुख से

सुना है कि वह विराट पुरुष हैं। आकाश उन का मस्तक है। चंद्रमा सूर्य उनके नेत्र हैं दसो दिशा उन के कान हैं। पाताल उन के चरण हैं मनमें विश्वास कर भक्ति से कोई कहीं से उन्हें पुकारे वे उसी समय सब सुन लेते हैं। मैया! तुम मेरी बात मानकर एक वेर माखन मलाई हाथ में लेकर गोपाल कहकर उन्हें पुकारो तो देखो वे अभी आकर तुम्हारा मनोरथ पूर्ण करेंगे।

(श्रीकृष्ण का प्रवेश)

यशोदा—तो अच्छा मैं अपने गोपाल को उसी तरह पुकारूं।

(गीत)

वत्स! गुपाल! गुपाल! नीलमन
आवहु आवहु वत्स अंक में।
आवहु आवहु ब्रज जन जीवन!
मैं अनेक दिन तोहिं खवायो।
नहीं, चौर मिसरी दधि माखन॥

(वसुदेवजी को जल देते देते श्रीकृष्ण के हाथसे झारी गिरती है)

(गीत)

मा! मा! क्यों मा? कौते कहां मा!
अवहि मोहि टेरत हो मैया।
हालहि चली गई री कित मा।
एजी मोहि बतावहु अवही।
टेरत कित गई मेरी मा? (नेपथ्य में)

देवकी जी—क्यों कृष्ण! क्यों बेटा! मुझे क्यों पुकारते हो? क्या तुम्हें भूख लगी है?

(देवकी जी का प्रवेश)

देवकी—कृष्ण बेटा! कृष्ण! आओ गोदी में ले लूं। आहा बेटा! क्या तुम्हें भूख लगी है? बेटा यह माखन मिसरी ले! अपने चंद्र मुख से मुझे एक वेर मा कहकर बोल। मेरा मन प्राण शीतल होय।

कृष्ण—(गीत)

कहां कहां दुखिया मा मेरी।
अहो मोहि कोई बेग बतावो।
वा मा विन मैं और न जानत।
देखि होय कोई मोहिं दिखावो।

बसुदेव—बलराम ! नेक आना बेग आना बेटा ! यह क्या भया। देखो तो मेरे कृष्ण को यह क्या भया सम्हालना कृष्ण को पकड़ लेना। यह अभी अब में क्या हो गया। देखो कृष्ण तुम्हारी बात मानता है। तुम उसे सांत्वना करो। उस के मन की बात पूछो यह है क्या ?

बलराम—हे कृष्ण ! ऐ कृष्ण ! (पकड़ने को जाते हैं पर कृष्ण पकड़ाई नहीं आते हैं) भाई आज तुम्हारा यह क्या भाव है ! हमारे तो कुछ भी समझ में नहीं आता है। भाई स्थिर हो ! शान्त हो ! मुझे बताओ तो तुम ऐसे क्यों हो गये हो ?

कृष्ण—(गीत)

मैया तोरे चरन धरत हौं कहो कहां मैया गइ मोरी।
अबहि पुकार गई किन देखी होय मोंहि ले चलवाओ री।

(आगे को चलते हैं)

हाय ! बाबा री जान कोऊ कित मेरी मैया तार गई है।

महादेव—बृह्मा जी ! देखिये ! देखिये ! चक्री भगवानकी क्या अनुपम माया है। आप भाव में विभोर हैं और समस्त जगत्को मत्त कर दिया है।

कृष्ण—अरे भाई ! कोई बताओ मेरी मैया कहां है ? यहां सभी तो हैं पर मेरी मा नहीं है।

नारद—(गीत)

मैं तुम्हरी मा देत दिखाई।
करुणाकर आंवहु यदुराई ॥

कृष्ण—(गीत)

मुनिवर ! तुम जानत मम माई ।

नारद—हरि ! तुम करुणावल लखपाई ।

कृष्ण—तहां लेचहु मोहि ऋषि ज्ञानी ।

टेरत जहां जननि नंद रानी ।

नारद—राज वेष करुणामय ! तेरो ।

ब्रजरानी कबहुं नहिं हेरो ।

ऐसेहि वेश आपनो जामें ।

नंद रानी पहिचान न पामें ।

तो निराश ह्वै प्राण तजांहीं ।

कह जदुराज करत मैं नाहीं ।

कटि तट निबिड़ पीत पट धारो ।

माथे मोर पखान सम्हारो ।

गावो अधर मुरलिया ताने ।

तब गुपाल कहि मा पहिचाने ।

कृष्ण—ऋषि वर यहां मात मम नाहीं ।

गोप वेश को देहि सजाहीं ।

को चट पट नट वेष बनावे ।

मोयेहु सो शृंगार न भावें ।

नारद—

जो कृपा मय हरे ! तुम्हरी अहो आयुस पाऊं मं ।

योगबल सों नाथ सोई गोप वेश सजाऊं मैं ।

(नारद श्रीकृष्ण का नटवर शृंगार कर).

आओ या द्वार लखहु प्रभु माय दुखारी ।

श्रीकृष्ण—(गीत)

कहं मा मेरी कहां मा मेरी ।

(यशोदा के पास जाकर)

यह तुम्हरो गोपाल मात सैं।

गोदी ले माखन किन देरी।

(बसुदेव और देवकी कृष्ण के पीछे पीछे बाहर आते हैं और एक ओर खड़े होकर देखते हैं।)

यशोदा—गोपाल ! मेरे लाल ! कहां था तू ? आमेरी गोद में आ। इतने दिन पीछे तुझे दुःखिनी मा याद आई ? नहीं मैं तुझे गोद में नहीं लूंगीं पहले एक बात बता तब लूंगीं।

कृष्ण—क्या मा ?

यशोदा—भला बता तो मथुरा से तू ने गोपराज को क्या कह-कर बिदा किया था ?

कृष्ण—मा बड़ी भूख लगी है पहले गोद में लेकर कुछ खाने को दे तब सब कहूंगा।

यशोदा—लाला ! अब मैं तेरे कपट के रोने से नहीं भूलंगी। तू ने कहा न था कि यशोदा मेरी मा नहीं, नन्द मेरा बाप नहीं ! जिस दिन यह सुना था उसी दिन प्राण त्यागती केवल एक बार तेरे मुंह से सुनने को जीती हूं। लोग धर्म्म की दुहाई देते हैं। यहां साक्षात् धर्म्म खड़ा है धर्म्म की बात कहना। ब्रह्मा, शिव, सूर्य्य, चंद्र सब यहां हैं इन सब के सामने सच सच कहो कि तू देवकी का पुत्र है या यशोदा नन्दन ?

कृष्ण—(स्वगत) अब के बात टेढ़ी है ! यदि बसुदेव पिता और देवकी माता कहते हैं तो अभी यशोदा मरती है। और जो नंद बाबा और यशोदा को माता कहते हैं तो देवकी को दुख होगा। पर खैर उन को दुःख होगा तो मना लेंगे वह मेरे जन्मका कारण जानती हैं। इस समय परम भक्तिमती यशोदाको ही प्रसन्न करना चाहिये। (प्रकाश) मा ! धीरज धरो मैं तुम्हारे सामने, जगत के सामने, त्रिभुवन के सामने सत्य सत्य कहता हूं तू मेरी मा है नन्द बाबा हैं।

देवकी—(जनान्तिक में) हैं ! क्या कृष्ण यशोदा का क्या यह मेरे कृष्ण को ठग ले जायगी ? हाय मैं क्या करूंगी

वसुदेव—(जनान्तिक में) डरो मत कृष्ण तुम को छोड़ नहीं जायगा। कृष्ण ने तो तुम्हारे गर्भ से जन्म लिया है फिर क्यों डरती हो ? इस समय कहकर कृष्ण यशोदा का मन करता है।

यशोदा—लाला ! तेरी मीठी वातों से मेरा जी ठण्ढा हु पर लोग प्रतीत न करेंगे। सब कहेंगे यशोदा को प्रसन्न करने के लिये कृष्ण ने मा कहा।

कृष्ण—तो माता तू जैसे चाहे परीक्षा करले।

यशोदा—(देवकी से) देवकी ! तू धन्य है। त्रिभुवन में तेरा ही यश गाया जाता है। जब मेरा कृष्ण तेरा है तो तेरे भाग्यका क्या ठिकाना ! सच कह कृष्ण किस का ?

देवकी—मेरा।

यशोदा—झूठ बात है। जो तुझे कृष्ण को बात का परियारा न हो तो यहां सब देवता हैं सब के सामने परीक्षा हो जाय कि कृष्ण किस का। कृष्ण बीच में रहे हम दूर दूर खड़ी हो जांय। माखन मिश्री हाथ में लेकर कृष्ण को पुकारें देखें वह किस को गोद में आता है। अच्छा पहले तू पुकार।

देवकी—अच्छा। कृष्ण रे आ मेरी गोद में। तुझे भूख लगी होगी माखन मिश्री खाले।

यशोदा—मेरी देख गोपाल तेरी गोद में नहीं आया अब म पुकारती हूं। (गीत)

टुक नाचत नाचत आओ लला।

मा, मा कह मनहीय जुड़ाओ, माखन मिश्री खाओ लला।

कृष्ण—ला मा दे माखन-मिश्री।

(यशोदा कृष्ण को गोद में लेती है।)

कृष्ण—पिता ! व्रज से प्रभास तक आते आप को बड़ा कष्ट हुआ होगा और बहुत दिन से आप अनाहारी हैं चलिये डेरे पर चलकर स्नान दान अहारादि करें।

नंद—लाला ! अब स्नान दान अहारादि करने का प्रयोजन नहीं है यहां ठहरना भी आवश्यक नहीं है चलो एक बार व्रज को चलो।

कृष्ण—बाबा ! यह अच्छा स्थान है यहां कुछ विश्राम कर लो काल सब मिलकर वृन्दावन चलेंगे। अब चलिये वसुदेव का यज्ञ देखिये। आप भी कुछ यज्ञादि करें तो वसुदेव से भी बढ़ कर कर सकते हैं।

नंद—लला ! हमें यज्ञ दान से क्या मतलब ! *धर्माधर्म पाप* पुण्य से क्या प्रयोजन ? सुना है कर्म्म की वासना रहने से फिर फिर जन्म लेकर दुख सुख भोगना पड़ता है। हमारा कर्म्म बंधन काटो। जिस से तुम्हें सदा पुत्र कह सकें सो करो।

यशोदा—बेटा ! तेरे शरीर में क्या तनिक भी दया नहीं ? जो तेरे बिना किसी को नहीं जानते हैं उन के गले में फिर कर्म्म की फांसी ! यह सब अपने वसुदेव देवकी को सिखा। हम व्रज वासियों को कर्म्म ज्ञान कुछ नहीं चाहिये। हमें तो तू चाहिये।

कृष्ण—(हंसकर) तब चलो वसुदेव का यज्ञ देखो।

नन्द—अच्छा चलो।

(सब गये।)

षष्ठम अङ्क ।

प्रथम गर्भाङ्क ।

प्रभास तीर्थ ।

(गंगा नदी तीरस्थ राधा कुञ्ज ।)

(आठ सखियों सहित राधा बैठी हैं ।)

राधिका—सखी ! श्रीहरि की कृपा से मैंने उन्हीं की रूप माधुरी लेकर जन्म लिया है । चराचर वासी मुझे परमा प्रकृति कहते हैं मेरे ही अंश से सरस्वती और लक्ष्मी जन्म ग्रहण करती हैं । आज वही पृथिवी पर रुक्मिणी और सत्यभामा बनकर उतरी हैं । आश्चर्य है कि मनुष्य शरीर पाकर वह अपने को भूल गयीं । अहंकार करके मेरा परिहास करती हैं । वह कभी मेरा पूर्ण रूप देखने को समर्थ न होंगी ।

(कुंजके द्वार पर पीताम्बर ओढ़े नटवर वेषमें श्रीकृष्णका प्रवेश ।)

कृष्ण—(गीत)

दाहं राधे मम प्राण पियारी !
दरस दिखाओ, प्राण बचाओ अब न दुरहु वृषभानुदुलारी ।
शाप दियो श्रीदामहिं तासों दूर रह्यों तुमसों सुकुमारी ।
अब सो शापहु भयो विमोचन, मिलहु मिटावहु पीर हमारी ।

(कृष्णजीको देखकर राधिका का सिर झुकाकर बैठना और रोना ।)

राधिका—(स्वगत) प्राणेश्वर को देखने के लिये इतना कष्ट उठा कर प्रभास में आयी । परन्तु दुर्भाग्य वश इस समय मान उपस्थित होकर दर्शन में बाधा डालता है । दूर हो मान, एक बार प्यारे से बातें करने दे । तेरे कारण एक बार मैं श्यामसुन्दर को खोकर सौ वर्ष तक दुःख भोग चुकी हूं जो तू न जायगा तो मुझे फिर कृष्ण कहां मिलेंगे । (चिन्ता करती है ।)

कृष्ण—प्यारी ने मेरा अपराध जान के मान किया है । अच्छा प्यारी के चरण छूकर क्षमा कराऊं ।

(राधा के पांव में गिरना।)

सखीगण—(गीत)

आज सखि! शोभा निरखन जोग।
शतदल को शतदल संगदेखहु, कैसो भयो संयोग।
हेम कमल पै नील कमल की शोभा कही न जाय।
निरखि निरखि छबिही यह सारी पुनि पुनि बलि बलि जाय

वृन्दा—(गीत)

देखहु करत कहा तुम प्यारी!
एरे लाल तेरे चरन में लाज कहां गइ मारी?
हियो जुड़ावहु, कण्ठ लगावहु मान गुमान बिसारी।

राधिका—लालजी मैं तुम्हारी दासी हूं। मरूं तुम्हारी रानियां जीती रहैं मैं प्रभास में मरने आयी अभिमान कुछ नहीं है। दया मय! अब कष्ट करना न होगा।

कृष्ण—(पीताम्बर से आंसू पोंछकर प्यारी क्या कहती हो? चेत करो तुम्हारे सामने किसी स्त्री का क्या आदर हो सकता है। तुम आद्याशक्ति ब्रह्म स्वरूपिणी हो। सब स्त्रियां तुम्हारी विभूति हैं इसी से मैं सब का मान रखता हूं अब आवो हृदय जुड़ाओ।

(राधा को हृदय से लगाना)

(श्रीराधा का अपना ऐश्वर्य्य और प्रभाव प्रकाश कर श्रीकृष्ण का वायां अङ्ग आकर्षण करना)

(राधा कृष्ण का अंतर्धान)

वृन्दा—सखी! जिस युगलरूपको देखनेके लिये इतना उत्पात इतनी चेष्टा थी आवो उस का दर्शन करें।

(पट परिवर्त्तन—युगल रूप।)

सखीगण—(गीत)

आज सखि मिलेउ चंद सों चंद।
दोउ मिलि भयो जगत उजियारो, चहुं दिशि बढ़यो अनन्द।
छिटकी जगमें सुखद चांदनी, दूर भयो तमताप।
ब्रह्ममयी को आज ब्रह्म संग पूरन भयो मिलाप॥

॥ समाप्त ॥